॥ ओ३म् ॥

धर्म्म-वीर पं० लेखराम

अनाश्रितः कर्म फलं,
कार्य्यं कर्म्म करोति यः ।
स सन्यासी च योगी च,
न निरग्निर्न च क्रियः ॥
गीता ॥ ६।१ ॥

लेखक
पं० गोकुलचन्द्र दीक्षित
रचयिता
"भारत संजीवनी, श्रीपथ प्रदर्शन" तथा अनुवादक
"दर्शनानन्द ग्रन्थ संग्रह" इत्यादि

सम्पादक तथा प्रकाशक
पं० ओङ्कारनाथ वाजपेयी

पं० ओङ्कारनाथ वाजपेयी के प्रबन्ध से ओंकार प्रेस प्रयाग में छपा ।

सन् १९१६

प्रथमवार] [मूल्य ।)

भूमिका

सज्जनो जिस प्रकार अभी आपकी सेवा में संसार के ६ महापुरुषों के जीवन चरित्र अर्पण कर चुका हूं उसी प्रकार आज धर्म-वीर पं० लेखराम जी की जीवनी आपके सन्मुख उपस्थित है। इस जीवन चरित्र के पढ़ने से आपको यह मालूम होजायगा कि सच्चे धर्म्मात्मा कितने बलवान होते हैं उन्हें सांसारिक भय अपने कर्तव्य पथ से नहीं डिगा सकते। पंडित लेखराम जी ने वैदिक धर्म्म के प्रचार में अश्रान्त परिश्रम किया था। ईसाइयों और मुसलमानों को आर्य्य बनाने का बीड़ा उठाया था। उनके व्याख्यान और शास्त्रार्थ बड़े प्रभाव शाली और युक्ति पूर्ण होते थे। अन्त में अपने कर्तव्य को पालन करते हुये वैदिक धर्म की वेदी पर एक कृतघ्नी मुसलमान के छुरे से आत्म समर्पण कर गये। आशा है इस छोटे से जीवन चरित्र से आप उचित लाभ उठावेंगे।

निवेदक

पं० ओङ्कारनाथ वाजपेयी

प्रयाग

ओ३म्

धर्मवीर लेखराम

" जननी जन्म भूमिश्च स्वर्गादपिगरीयसी "

जन्मभूमि

नाना-दिव्यौषधि-महौषधि-विविध-निधि रत्न गर्भा, प्राकृतिक सौन्दर्य छटागार नगाधिराज हिमालय की कोख में स्थितभू, सङ्ग्रामाङ्गणैक-पटु सिक्ख जाति प्रसू होनेसे वीर-भूमि नाम से श्लाघ्य है। जो सिन्धु शतद्रु विपाशादि पश्चिम सराभिगामिनी सरिता सलिल प्रवाह से पंजाव नामसे प्रख्यात तथा अपरिमेय अन्न राशि उत्पादिका होने के कारण जहांकी उर्वरा भूमि कहलाती है। जिस हिमवानकी निरन्तर हिम पिहित अंचलच्छाया में, कश्मीर, काङ्गड़ा, शिमला, जम्बू, प्रभृति अनेक अत्यन्त रमणीक पार्वतीय प्रदेश उसके शिरोभूषण और संसार के अन्य सुरम्य नगरों से अधिक स्पर्द्धा के योग्य विद्यमान हैं। उसी उन्नत भूमि पंजाव देश के रावल पिण्डी प्रान्त के पोठो वार नगर के 'कुहुटा' नामक ग्राम में सवसे पूर्व पं० लेखराम जी के पूर्व पुरुषा निवास करतेथे।

" सजातो येन जातेन यातिवंशः समुन्नतिम् "

इनके प्रपितामहका शुभ नाम "प्रधान" बतलाया जाता है। वह *शाण्डिल्य गोत्रिय सारस्वत ब्राह्मण थे। इनके दो पुत्र

---

* पंजाब देश में वह ब्राह्मण जो फौजी नौकरी करतेहैं वे मुहिपाल कह-

वंशावली

हुये जिसमें पहिले का नाम महता नारायन सिंह और दूसरे का श्यामसिंह था। महता नारायणसिंह के दो पुत्र थे बड़े पुत्र का नाम महता तारा सिंह और छोटे का महता गण्डामल था। महता तारासिंह के तीन पुत्र और एक पुत्री थी, सब से ज्येष्ठ पुत्र का नाम स्वनाम धन्य पं० लेखराम दूसरे, का तोताराम, तीसरे का बालकराम और पुत्री का नाम मायावी था।

"सदेशो यत्र जीवति"

पं० लेखराम जी के पितामह महता नारायण सिंह झेलम प्रान्त में चकवाल नामक तहसील के सय्यदपुर नामी ग्राम में सर्दार कान्हसिंह मजीठिया के यहां सवारों में नौकर थे यह शरीर के बड़े सुडौल, बलिष्ट तथा दृढ़ पुरुष थे इनकी बहादुरी के कारण सर्दार कान्हसिंह इनका बड़ा मान करते थे एक बार पेशावर में सर्दार कान्हसिंह के साथ पठानों का युद्ध हुआ जिस में महता नारायण सिंह के गले में गोली का घाव आया परन्तु रणवीर नारायण सिंहने किसी प्रकार का चित्त पर मैल नआने दिया और बराबर साहस पूर्वक युद्ध करते रहे। युद्ध समाप्त होने पर जब आप पूर्ण निरोग हुये तो सर्दार बहादुर ने आप का स्वर्ण कङ्कणों से कर सन्मान किया। यह बड़े दृढ़ प्रतिज्ञ पुरुष थे जब वृटिश (आङ्गल) राज्य शासन कालमें प्रजा से हथियार लेलिये गये तो नारायण सिंह ने अपने हाथों से

वंश प्रशस्ति

लाते हैं अतः किन्ही २ के मत से वे सूदन मुहिपाल ब्राह्मण थे और सूदन जाति विशेष का नाम है-लेखक-

हथियार हरण किये जाने को अपना अपमान समझा परन्तु देश, काल और अवस्था का विचार कर स्वयं "पुच्छ" के राज्य में जाकर हथियारों को बेच डाला और सम्वत् १९१२ के लगभग आप कश्मीर के प्रतिष्ठित सर्दार हाड़ासिंह के यहां कोठारी के पद पर नियत हुये परन्तु अन्त को पुनः अपनी ससुराल सय्यदपुर में लौट आये और उन का देहान्त संवत् १९२५ में वहीं हुआ।

"वरमेकः कुलालम्बी, यत्र विश्रूयतेपिता"

लेखराम का जन्म

* वैशाख सम्वत् १९१५ विक्रमीशुक्रवार के दिन सय्यदपुर में पं० लेखराम जी का जन्म हुआ उस समय किसी को ज्ञात न था कि यह बालक कोई एक साधारण पुरुष न होगा। किन्तु धर्म्म पर अपने प्राणों को बलिदान करने वाला धर्म्म वीर कहलावेगा। ४ वर्ष की अवस्था तक उनका घर में ही पालन पोषण होता रहा। इस समय लोग बड़े लाड़ चाव के कारण इन्हें "लेखू" के नाम से पुकारते थे। वे अपने साथियों के साथ ऐसे २ कौतुक करते कि (किसी ने सच कहा है कि "लाल गुदड़ियों में नहीं छुपते") जिसे अन्य पुरुष देख कर बड़े अचम्भित होते थे।

नवाऽविद्वान् रूपद्रविणगण युक्तोऽपितनयः

शिक्षा का प्रबन्ध

पंचम वर्ष के आरम्भ में इनके माता पिता ने ग्राम की प्रथानुसार देहाती मदर्से में फ़ारसी पढ़ने के लिये बैठा दिया। उस समय पंजाब में उर्दू का सार्वभौम साम्राज्य था अतः अक्षरारम्भ काल में नागरीलिपि के स्थान

* कुछ पुरुष चैत्र में बतलाते हैं।

में हमारे चरित्र नायक को उर्दू लिपि ही सीखनी पड़ी। उस समय पाठशाला के मुख्याध्यापक मुं० तुलसीदास जी थे। इनके स्वतंत्र विचार तथा प्राचीन ढर्रे के वर्त्ताव का इनके चित्त पर बड़ा प्रभाव पड़ा। वह अपने सपाहियों में सब से चतुर और तीक्ष्ण बुद्धि के थे। मुं० तुलसीदास जी के अध्यापन काल में इनकी शिक्षा की पूर्ण जड़ जमगई जिसके कारण यह फ़ारसी के एक अच्छे विद्वान समझेजाने लगे।

आकेर पद्मरागाणां जन्म कांचमणेः कुतः

वैदिक संस्कारों का प्रभाव

सम्वत् १९२६ में जब लेखराम जी की आयु ११ वर्ष की थी। उनके चचा महता गण्डामल जी पेशावर पुलिस में किसी स्थाई स्थान पर नियत हो गये और उन्होंने लेखराम जी को अपने पास बुला लिया। यहां पर इन्हें बहुत से अध्यापकों से पढ़ना पड़ा परन्तु इनके चचा ने इन्हें स्थाई रूप से एक मुसलमान (यवन) अध्यापक के पास पढ़ने को भेज दिया। एक दिन मौलवी साहब ने इन्हें पानी पीने की छुट्टी नहीं दी और कहा कि यहीं पीलो–वस्तुतः मुसलमान अध्यापक यतः ततः बाल्यावस्था के बालकों पर यावनी मत प्रलेप करने का अधिक प्रयत्न करते हैं परन्तु कुशाग्रबुद्धि पं० लेखराम जी के हृदय पर प्रभाव पड़ना कठिन था उन्होंने शीघ्र ही मने कर दिया कि "मैं नहीं पिऊंगा" और यावत संध्या समय घर को गये तावत् प्यासे ही रहे। जहां इनके चित्त में हठ था वहीं उन्हें अपने धर्म पर बड़ी रुचि थी। एक दिन अपने चाचा को एकादशी का व्रत रखते देख इन्होंने भी अपने चित्त में व्रत रखने का संकल्प किया और कठिन भूख प्यास सहन करते हुये व्रती होने

का परिचय दिया।

"माता पितृ कृताभ्यासो गुणितामेति बालकः"

मानसिक शिक्षा का प्रभाव

किसी मनुष्य की मानसिक शक्ति ज्ञात करने के लिये उसकी बाल्यावस्था के चरित्र निरीक्षण करने की आवश्यकता है। लेखराम जी की प्रकृति में यदि स्वतंत्रता कूट २ कर भरी थी तो उनके पैतृक संस्कारों तथा अध्यापकों के शिक्षा कुशल होने का प्रमाण है। यदि उनकी वक्तृत्व शक्ति असीम थी तो विद्याभ्यास तथा स्वाध्याय का फल था। यदि उनमें आत्म-समर्पण के भाव थे तो यह उनके आत्मिक बल की परीक्षा अथवा परिचय था। यदि उनको फ़ारसी कविता की धुनि थी तो फ़ारसी भाषा पर पूर्ण भरोसा और अधिकार था जहां उनकी स्मरण शक्ति बढ़ी चढ़ी थी वहीं उन्हें अपने ब्रह्मचर्य का पूर्ण ध्यान था। संसार में बहुधा देखा गया है कि "होन-हार बिरवान के होत चीकने पात" परन्तु पूर्व संचित संस्कारों के सम्यक् उदय के लिये किसी अच्छे नियमों के पालन करने की आवश्यकता है इसीलिये कहावत प्रसिद्ध है कि "जने जने अन्तर, कोई हीरा कोई कङ्कर" मनुष्य बनने के लिये उत्तम संस्कारों की सामग्री संचय करना आवश्यक है इस जगत में बहुधा अनेक मनुष्यों के जीवन बने हुये बिगड़ते और बिगड़े हुये बनते देखे गये हैं। यह केवल समयानुसार यथा उपार्जित भले और बुरे भावों के ही कारण है क्योंकि मानसिक शिक्षा का सदाचार पर बड़ा प्रभाव पड़ता है अतः सदाचारी बनने के लिये उच्च भावों की आवश्यकता है। हमारे चरित्रनायक लेखराम जी के जीवन में उच्चभाव मानों

पैतृक सम्पति थे। इनका साधारण स्वभाव इनके आर्य होने का परिचय देता था। इनके पुरुषार्थ और धैर्य तथा औदार्य भावों के ही कारण २५ वर्ष से भी न्यून अवस्था में पेशावर प्रान्त के उच्चाधिकारियों ने उसी प्रान्त की ऐतिहासिक व्यवस्था का कार्य इन्हें दिया था जिसमें उनकी बुद्धि वैलक्षण्य की बड़ी प्रशंसा हुई।

"गम्यतामर्थ लाभाय क्षेमाय विजयायच"

आजीविका प्रबन्ध

अभी बाल्यावस्था धनच्छाया की भांति टलही पाई था, युवावस्था का मन्द २ गति से पदारोपण हो ही रहा था कि लेखराम के चचा ने पेशावर पुलिस के सुपरिन्टेन्डेन्ट कृस्टी साहब से उनकी आजीविका के लिये कहा—निदान सम्बत् १९३२ विक्रमी पौष मास तदनुसार २१ दिसम्बर सन् १८७५ ई० के दिन जब कि इनकी अवस्था केवल १७ वर्ष की थी उक्त साहब बहादुर ने पुलिस में भरती किये जाने की आज्ञा प्रदान की और इन्होंने पुलिस का सब काम बड़ी शीघ्रता से सीख लिया इसके अनन्तर सन् १८७६ ई० में नकशा नवीस सारजन्ट का काम स्थाईरूप से करने लगे।

"चन्द्र चन्दनयोर्मध्ये शीतला साधु संगतिः"

स्वतन्त्रता और संगति का प्रभाव

लेखराम की अवस्था जब कि १६ वर्ष की थी तो एक धार्मिक सिक्ख सिपाही के सत्सङ्ग से उन्हें परमात्मा की उपासना का अभ्यास होगया था। प्रातःकाल स्नान करके समाधि लगाकर बैठ जाते और गुरुमुखी अक्षरों में गीता का पाठ किया करते थे। यह बहुधा

रात्रि को समाधि लगाये रहते और कई बार ऐसा हुआ कि ध्यान में निमग्न होने के कारण खाट पर से पृथिवी पर गिर पड़ते थे। गीता पढ़ने का यह परिणाम हुआ कि यह कृष्ण भगवान के अनन्य भक्त होगये और रासलीला देखनेकी अभिरुचि उत्पन्न हुई। टीके लगा २ कर "श्रीकृष्ण श्रीकृष्ण" का ही जाप करते थे। कृष्ण भक्ति में प्रेम बढ़नेके कारण नौकरी छोड़कर वृन्दावन धाम सेवन को उद्यत होगये। इन सब विचारों से पूर्व आप शिवजी के परम भक्त थे। रुग्नावस्था में भी मठों में जाते थे। परन्तु आरम्भिक ईश्वराराधन के संस्कारों के कारण इनके चित्त में सम्वत् १९३८ में एक वैराग्यकी लहर उठी। इस समय इनके विचार सर्वथा नवीन वेदान्तियों के से थे। सांसारिक भोगों को मिथ्या कहकर भोग साधन की सामग्री संचय करने के सर्वथा विरुद्ध थे। वेदान्तके सिद्धांतों की छेड़ छाड़ ही उनका मनोरञ्जन था।

न गृहम् गृहिणी बिना गृहणी गृहमुच्यते

सन् १८८० ई० में जब कि इनकी अवस्था २२ वर्ष की थी इनके माता पिता ने विवाह के निमित्त बहुत कुछ समझाया बुझाया और इसके अतिरिक्त इनके चचा गण्डामल जी ने भी बहुत कुछ कहा कि भाई बिना गृहस्थी के मनुष्य आयु भली प्रकार नहीं बिता सकता। परन्तु लेखराम जी ने सब सुनी अनसुनी कर नम्रता तथा समादर पूर्वक मने कर दिया—वैराग्य से प्रेरित हरिभक्त ने जो उत्तर दिया था वह उल्लेखनीय है। लेखराम जी ने उदाहरण की रीति से कहा कि "प्यारे चाचाजी एक राजा के पास कुछ नट कौतुक कला दिखलाने को आये

विवाहका प्रबन्ध और उससे इनकार

राजा ने कहा कि भाई नटो ? किसी योगी का अभिनय करो। भंडार से तुम्हें ५००) रु० पारितोषिक का मिलेगा। सुनते ही एक नट ने योगी का रूप धरकर दिखा दिया परन्तु जिस समय समाधि छोड़ी शीघ्र ही पारतोषिकके लिये हाथ पसारा यह कहावत सुना कर कि "स्वयमसिद्ध कथं परान्न साधयेत्" मैं गृहस्थाश्रम में फंसकर अपने अभीष्ट कार्य को भली भांति सम्पादन न कर सकूंगा" अन्तमें इनके चित्त की दृढ़ताई देख कर सबको मानना पड़ा—वाकदान हो जाने के कारण इनके माता पितादि ने उस कन्या का विवाह अपने छोटे पुत्रके साथ कर लिया।

धर्मानुगो गच्छति जीव एकः

धर्म कार्यों में अनुराग वृद्धि

इन्हीं दिनों अर्थात् १८८० ई० में काशी नगर से एक सटीक गीता मँगवाकर उस का पाठ किया करते और मुन्शी कन्हैयालाल अलखधारी तथा मु० इन्द्रमणि की बनाई हुई पुस्तकोंको भी प्रेम से पढ़ते थे। एक दिन महाशय कृपाराम जी ने उन्हें मुहम्मदी मत के ग्रन्थों को पढ़ता देखकर पूछा कि आप यवन मत-सम्बन्धी पुस्तकें अधिक क्यों देखते हैं। क्या यह मत आप को श्रेय विदित होता है। वहां क्या विलम्ब था पं० जी ने उत्तर में कहा कि निस्सन्देह यदि दश घड़े रक्खे हों तो बिना परीक्षा अथवा पड़ताल के खोटे अथवा खरे होने का क्या प्रमाण ? बस यही दशा मतों की है कि बिना सत्यान्दोलन अथवा परीक्षा के पता लगाना कठिन है कि कौन मत सच्चा और कौन मत कच्चा है ! थोड़े ही दिनों में पं० जी यवन मत की कड़ी समीक्षा करने लगे इस बात की चर्चा सब पुलिस में

फैल गई और जब क्रिस्टी साहिब पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट को इस बात का पता चला तो बहुधा वह अपने डिपुटी रीडर मौ० वज़ीर अली के साथ इनका यवन मत पर शास्त्रार्थ देखा करते थे और प्रायः सदैव पं० जी की ही बातोंका अनुमोदन करते थे। इसी अवसर में एक दिन "विद्या प्रकाश" नामक पत्र के द्वारा ज्ञात हुआ कि एक संन्यासी स्वामी दयानन्दजी सरस्वती नामक सत्य धर्म का उपदेश कर रहे हैं और वह मत सम्बन्धी शङ्काओं को विद्या और बुद्धि द्वारा सिद्ध और निवारण करते हैं। शीघ्र ही इच्छा उत्पन्न हुई और उनको एक पत्र लिखा और स्वामी जी की सब पुस्तकों को मगाया साथ ही उपरोक्त पत्र का मँगवाना आरम्भ कर दिया—फिर क्या था पुस्तकें पढ़ने और सत्य प्रामाणक सूचनाओं से अन्धकार युक्त मन में उजाला आगया। और सम्पूर्ण सत्यासत्य के विवेचन से मिथ्या बातें किनारा करगईं। और सत्य-वैदिक पथ दिखलाई देने लगा—अन्तको वैदिक धर्म्म को धन्यवाद देते हुये अप्रेल सन १८८१ ई० अर्थात् सम्बत् ११३७ वि० में पेशावर में आर्य-समाज स्थापन की और पूर्ण उत्साह से वैदिक धर्म परिचर्य्या करने लगे—इन दिनों इन्हें धार्म्मिक धुनके सामने सब सर्कारी काम भी हेठे तथा फीके लगते थे।

पेशावर में आर्य्य समाज।

सद्भिः सह कुर्त्तव्यः सतां सङ्गोहि भेषजम्

लेखराम जैसे दृढ़ी मनुष्य के चित्त की केवल पुस्तकों के पढ़ने से शंकाओं की निवृत्ति होनी कठिन थी उसकी महत्वाकांक्षा उस के मन के कौतूहलों को दुबाला कररही थी परन्तु "यः

दयानन्द दर्शनाऽकांक्षा।

पराधीनवृतिः" अर्थात् नौकरी के कारण मन की लहर मन में ही समा जाती थी—निदान एक दिन उन्होंने अपने जी में ठान लिया कि वैदिक धर्म्माचार्य्य, सत्सम्प्रदायाचार्य्य आर्य समाज के प्रवर्त्तक ऋषि दयानन्द के दर्शन कर संशयों की अवश्य निवृत्ति करनी चाहिये—अतः उनका अशीर्वाद लेने के लिये साढ़े चार वर्ष की नौकरी के पश्चात् एक मास की पहिली छुट्टी ता० ५ मई सन् १८८१ को लेकर ११ मई १८८१ में अजमेर की ओर प्रस्थान किया। मार्ग में मेरठ, अमृतसर इत्यादि बड़ी समाजों को देखते हुये ता० १६ मई की रात्रि को अजमेर नगर में पहुंच कर स्टेशनवाली सराय में डेरा जमाया। और प्रातःकाल बड़े हर्ष के साथ सेठ फ़तहमल की वाटिका में पहुंच कर ऋषि दयानन्द के प्रथम तथा अन्तिम बार दर्शन किये-स्वामी जी के जीवन चरित्र में पं० लेखराम जी लिखते हैं कि स्वामी जी महाराज के दर्शनों से मेरे सब कष्ट दूर हो गये और चित्त को बड़ा हर्ष उत्पन्न हुआ और उनके सदुपदेश से सब शंकाओं की निवृति होगई। जयपुर में पं० लेखराम जी से एकबंगवासी ने प्रश्न किया कि आकाश भी व्यापक है और ब्रह्म भी फिर दो व्यापक एकत्र कैसे रह सकते हैं" इसका उत्तर उनसे न बन आया और यही शंका उन्होंने स्वामी जी से पूछ कर निम्न लिखित उदाहरण से निवृति करली—स्वा० दयानन्द जी ने एक पत्थर उठाकर कहा कि "इसमें अग्नि व्यापक है वा नहीं" उत्तर में कहा था कि "व्यापक है" फिर पूछा कि "मिट्टी" कहा कि "व्यापक है" फिर पूछा "परमात्मा ?" उत्तर में निवेदन किया कि "वह भी व्यापक है, तब स्वामी जी ने लेखराम

दर्शन प्राप्ति।

शंका समाधि।

जी से कहा कि तुमने देखा ? कितने पदार्थ हैं परन्तु सब इसमें व्यापक हैं वस्तुतः यह बात है कि जो वस्तु जिससे सूक्ष्म होती है वही उसमें व्यापक हो सकती है। ब्रह्म यतः सूक्ष्मातिसूक्ष्म है अतएव सर्वव्यापक है इस उत्तर से लेखराम जी की शंका दूर हो गई। इसके अनन्तर स्वामी जी ने कहा कि यदि और कुछ शंकाएं तुम्हारे चित्त में हों तो उनको निवारण कर लो—लेखराम जी ने पुनः कुछ प्रश्न किये जो नीचे लिखे जाते हैं।

प्रश्न—जीव और ब्रह्म का भेद कोई वेदोक्त प्रमाण बताइये ?

उत्तर—स्वामी जी ने कहा कि यजुर्वेद का चालीसवां अध्याय जीव और ब्रह्म के भेद को प्रतिपादन करता है। इस अध्याय को "ईशोपनिषत्" भी कहते हैं।

प्रश्न—अन्य मतावलम्बियों का प्रायश्चित्त करना चाहिये वा नहीं ?

उत्तर—अवश्य शुद्ध करना चाहिये—प्रायश्चित्तविधि शास्त्रानुकूल है।

प्रश्न—बिजुली क्या वस्तु है और कैसे उत्पन्न होती है ?

उत्तर—विद्युत् प्रत्येक स्थानों में है और संघर्षण (रगड़) से उत्पन्न होती है। बादलों की बिजुली बादलों की रगड़ से उत्पन्न होती है।

इत्यादि शंका समाधान के अनन्तर स्वामी जी ने आदेश दिया कि २५ वर्ष की अवस्था से पूर्व विवाह मत करना। इसके पश्चात् ४ मई सन् १८८१ ई० को दोपहर के समय जब स्वामी जी से बिदा होने के लिये गये तो स्वामी जी से कोई वस्तु चिन्ह के लिये मांगी तो स्वामी जी ने एक पुस्तक

अष्टाध्यायी की उठाकर दे दी--जो अब तक पेशावर आर्य-समाज में विद्यमान है इसके अनन्तर लेखराम जी ने स्वामी जी के चरणों को को स्पर्श किया और "नमस्ते" करके घर की ओर सिधारे। अजमेर से लौटते ही पेशावर आर्य-समाज से उर्दू का मासिक पत्र धर्मोपदेश नामक निकालने का प्रबन्ध किया और सम्पादन का भार भी स्वयं अपने हाथों में लिया—आर्य-समाज के प्रचार तथा उन्नति के लिये बड़ा श्रम उठाया यहां तक कि नौकरी के दिनों में ही सत्यवक्ता प्रसिद्ध हो गये और मत सम्बन्धी विषयों में निर्भीक निष्पक्ष वार्तालाप करते थे। इसको अनन्तर जन साधारण में निडर होकर मौखिक धर्मोपदेश भी करते थे मदिरा को रोकने के लिये जब पेशावर में सब से प्रथम "टेम्परेन्स सोसाइटी" (मद्य निषेध परिषद) का प्रथम वार्षिकोत्सव हुआ तो उसमें सम्पूर्ण लोकल अफ़सर और फ़ौजी अफसर उपस्थित थे पं० लेखराम ने एक प्रभावशाली व्याख्यान दिया जिस से सब श्रोतागण अचम्भित हुये और इनकी वक्तृत्व शक्ति की प्रशंसा करने लगे इसी कारण पक्षपाती अफसरों की इनसे कभी न बनती थी उस व्याख्यान का यह प्रभाव हुआ कि एक फ़ौजी कप्तान ने व्याख्यान का समर्थन किया और कहा कि मैंने भी अपनी सेना में मद्यपान इन्हीं दोषों के कारण बन्द करा दिया है।

मासिक पत्र का प्रबन्ध।

मद्यपान निषेध।

"उपर्युः नीचतर्गच्छात् दशाचक्र क्रमेण"

सन् १८८३ ई० के आरम्भ में मिस्टर क्रिस्टी का तबादिला हो गया और नये सुपरिन्टेन्डेन्ट के आने पर और भी

बहुत सी तबदीलियां (परिवर्तन) हुई इसी चक्र में हमारे चरित्र नायक का भी तबादिला "सुआवी" नामक स्थान को हो गया। वहां जाकर भी धर्म्म प्रचार और पत्र का सम्पादन बड़े प्रेम से करते रहे। परन्तु किसी आर्थिक प्रबन्ध को न देखकर पेशावर आर्य-समाज ने उस पत्र को बन्द कर दिया। यह देखकर पं० लेखराम जी ने एक पत्र १८ मार्च सन् १८८४ में अपने चचा के लिये लिखा जिससे विदित होता है कि पं० जी की न्यून आय होने पर भी वह आर्थिक सहायता देने को उद्यत थे।

"सुआवी" के थाने में पहुंच कर भी उनका महम्मदियों के साथ शास्त्रार्थ हुआ करता था। एक दिन पुलिस के इन्सपेक्टर ने जो थाने के निरीक्षण (मुलाहिज़े) करने आया था लेखराम से मुबाहिसा (शास्त्रार्थ) करने लग गया। पं० लेखराम जी कब डरनेवाले थे। इन्होंने बड़े मुंह तोड़ उत्तर दिये परन्तु उस समय तो उसने कुछ नहीं कहा। दूसरे दिन आज्ञा भंग की रिपोर्ट कर दी जिसके कारण ता० १२ जून १८८३ को सदर से आज्ञा मिली कि "लेखराम का छः मास के लिये दर्जा तोड़ दिया जावे और वह थाना "कालूखां" में बदला जावे। इस स्थान में रहते हुये लेखराम का महम्मदियों से अधिक द्वेष बढ़ गया था। इस कारण काम से अवकाश भी बहुधा कम मिलता था। और "सत्योपदेश" के जीवन का सारा भार पं० जी के ही ऊपर था इसके अतिरिक्त पत्र की आर्थिक दशा में कोई हाथ बँटाने वाला भी न था, इत्यादि कारणों से सत्योपदेश नामक पत्र भी घाटा होने के कारण पेशावर आर्यसमाज को बन्द करना पड़ा। इधर थाना कालू

खां में पहुंचने से पूर्व यहां के महम्मदियों में बड़ी धूम मचगई इसके अतिरिक्त दोनों पत्रों के बन्द हो जाने से पं० जी ने पुस्तकों की—रचना का कार्य करना आरम्भ किया और नवेद वेवग़ान नामक पुस्तक बनाई।

स्वधर्म्मनिधनं श्रेयः पर धर्म्म भयापहः

कुछ दिनों पश्चात् एक तड़ित सम्वाद सुनने में आया कि आजमगढ़ निवासी चौधरी घासीराम मुसलमान मत स्वीकार करने वाले हैं। इस सम्वाद से उनके चित्त पर बड़ा क्लेश हुआ और शीघ्र ही छुट्टी ली और वहां जाकर उसको ऐसे प्रभाव शाली उपदेश किये कि वह शीघ्र ही सत्यमार्ग पर आरुढ़ हो गया। परन्तु छुट्टी न मिलने के कारण इन्होंने त्याग पत्र दे दिया। परन्तु लेखराम जी अपने कार्य में चतुर थे अतः पुलिस अफसर ने शीघ्र ही त्याग पत्र लौटा कर छुट्टी स्वीकार कर ली।

वेदोहि अखिलो धर्म्मः अधर्मस्तद्विपर्ययः

इसी वर्ष कश्मीर की राजधानी जम्बू नगर में मियां नूरुद्दीन खां ने जोकि पेशावर प्रान्त के भेरा नामक नगर के निवासी थे और महाराज कश्मीर के हकीम थे एक ठाकुर दास नामी पुरुष को यवन मत ग्रहण करने पर आरुढ़ किया। ज्योंही पं० लेखराम जी ने यह समाचार सुने तो ३ या ४ बार जम्बू जाकर उससे बात चीत की और अन्त को यवन मत से हटा कर वैदिक धर्म्म पर विश्वास दिलाया इसी बीच में पं० धर्मचन्द्र जी प्रधान आर्य-समाज अमृतसर के ज्येष्ट पुत्र पं० नारायण कौल जी (जज अदालत सदर जम्बू) से मिलाप किया।

स्वातंत्र्यम् यच्छरीरस्य मृढ़ैस्तदपि हारितम्

कश्मीर से लौटने पर पं० लेखराम जी के हृदय में नौकरी से *अकस्मात घृणा उत्पन्न हो गई। उन्हों-ने अन्त को गम्भीर परामर्श से यहि निश्चय किया कि—

नौकरी से त्याग पत्र

अत्यर्थनाति चेष्टेत साहि धात्रैवनिर्म्मिता
गर्भादुत्पतिते जन्तौ मातुः प्रस्रवतःस्तनौ

अर्थात्-जीविका के लिये अत्यन्त चेष्टा नहीं करनी चाहिये। क्योंकि ईश्वर ने उसका प्रबन्ध तो पूर्व से ही किया हुआ है। बालक के गर्भ से निकलते ही माता के दोनों स्तनों से दूध निकलने लगता है। अतः अब इस नीति के वाक्य का अनुसरण करना चाहिये "हीन सेवा न कर्तव्या कर्त्तव्यो महदाश्रयः" अर्थात् हीन सेवा के स्थान में बड़े का आश्रय करना चाहिये यह दृढ़ विचार कर नौकरी से त्याग पत्र दे दिया। यद्यपि इनके त्याग पत्र देने से स्थानिक हाकिम ने उसे लौटा लेने को कहा और इसी कारण उसने स्वीकार करने में देरी की परन्तु दृढ़ प्रतिज्ञ पं० लेखराम की सत्यधर्म्म की अन्वेषक आत्मा पर इसका कुछ प्रभाव न पड़ा उनकी आत्मा से वार २ यही गूंज उठती थी कि "न भवति पुनरुक्तं भाषितम् सज्ज-

* पेशावर को पुलिसआज्ञा पुस्तक से उन दो आज्ञाओं की प्रति से पता लगता है कि वहां के मुसलमान सब इन्सपेक्टर और सार्जन्ट लेखराम का १ दर्जा किसी हज़रतशाह चौकीदार के मुकद्दमे में असावधानी के कारण तोड़ दिया गया था। यद्यपि यह आज्ञा ६ जून १८८४ ई० को निकली थी तथापि लेखराम सार्जन्ट को इससे पूर्व ही पुलिस दफ्तर में बदल लिया गया था और असिस्टेन्ट मेजिस्ट्रेट की पेशी में रक्खा गया था--उद्धृत्र

नानाम्" अर्थात् सज्जन पुरुष अपने कहे हुये से फिर नहीं हटते। अन्त को जब त्याग पत्र की स्वीकारी में विलम्ब जान पड़ा तो ता० २४ जुलाई सन् १८८४ ई० को लेखराम जी ने स्वयं अपने हाथों से हुक्म लिखकर उस पर मि० निकलसन के हस्ताक्षर करा लिये और इस प्रकार अपने ही हाथों से मनुष्यों के दासत्व की श्रङ्खला को तोड़ सदा के लिये मुक्त हो गये। दासत्व से मुक्त होने पर सब से पहिले रावलपिण्डी के वार्षिकोत्सव पर पहुंचे वहां इनका लेखबद्ध व्याख्यान हुआ।

लेखबद्ध व्याख्यान

आर्यधर्म के सार्वभौम होने के प्रमाण और उसकी भविष्यत उन्नति के उपाय

प्रिय श्रोतागण ? आज कैसा शुभ दिन है मुझे आप के सन्मुख कुछ निवेदन करने का अवकाश मिला है। मैं केवल दो बातों के निमित्त अर्थात् पहिले आर्य-धर्म्म का सारभौम होना और उसकी वर्तमान दशा दूसरे उसकी उन्नति के संकेत पर आप सज्जनों के सन्मुख कुछ वर्णन करूंगा।

महाशय गण ? जिस प्रकार एकही परमात्मा जगत का कर्ता है उसी प्रकार एक सत्य धर्म्म भी सम्पूर्ण जगत के लिये एक ही होना चाहिये। इस स्थान पर यद्यपि एक प्रश्न उत्पन्न होता है कि वह धर्म्म कौनसा है ? क्या बौद्ध, जैन, यवन, ब्राह्म अथवा ईसाई मत है या अन्य इत्यादि—(परहित चिन्तन) सब से पूर्व बौद्ध मत की ओर आइये–यद्यपि वह हमें इख़लाक़ी जीवन की उच्च शिक्षा देता है परन्तु हम इस कहावत का आश्रय लेते हुए कि "मूढ़ वैद्य प्राणं समाचरेत्" अर्थात् उसकी शिक्षा हमारा भविष्यत उन्नति के लिये नितान्त अधूरी है। दो एक रूखे सूखे प्रमाणों के अतिरिक्त कुछ ज्ञान उपार्जन नहीं कर सकते। जिससे न हम ईश्वर ही को जान सकते हैं न जीवात्मा की उन्नति कर सकते हैं किन्तु हमारी बुद्धि को एक सत्य के सरलमार्ग से हटाकर कि जिस ज्ञान से हम परमात्मा को समझ सकते हैं अन्धकार में डाल देता है जिससे शान्ति का प्राप्त करना नितान्त असम्भव है इससे

सिद्ध हुआ कि यह मत संसार के लिये नहीं हो सकता। दूसरा जैन धर्म्म है इनका केवल एक कथन है कि जय जिनेन्द्र देव की। इसी शब्द से इनकी उत्पत्ति हो सकती है परन्तु इनके यहां एक अति उत्तम बात है कि इन पुरुषों में जीव हिंसा और मांस भक्षण से बड़ी घृणा है इसके अतिरिक्त एक बड़ा दोष भी है कि परमात्मा को नहीं मानते। अर्थात् नास्तिक हैं। दश तीर्थङ्करों को ही ईश्वर मान रक्खा है और सृष्टि को विना करता के मानते हैं। जब कर्त्ता ही नहीं और न कोई फल दाता है तो फिर सज़ा व जज़ा (बद्ध और मोक्ष) कहां मानो उनके यहां पाप करना कोई अधर्म्म ही नहीं ऐसा धर्म्म सार्वभौम धर्म्म कैसे हो सकता है। अब तीसरी संख्या में यवन मत है। उनके इलहाम (ईश्वर वाक्य) अर्थात् कुरान में वर्णित हैं यथा "तहक़ीक असली कुरान किसी पोशीदा किताब में है उसको नहीं जानता कोई दिल मगर पाक होवे वह किताब जो उतरी हुई है पर्वदिगार आलम से "मगर आज तक कोई मुफ़स्सर (टीकाकार) स्पष्ट रीति से यह प्रमाणित नहीं कर सका कि वह पुस्तक कौन है और कहां है। इसके अतिरिक्त मुक्ति के विषय में इससे बढ़कर और कोई आयत उनके यहां नहीं है कि " ख़ुश खबरी दी उनको जो ईमान लावें और जिन्होंने अच्छे काम किये इस बात के कि उनके पास बाग़ है और जारी हैं उनके नीचे नहरें जिस समय दी जावेगी इस जगह से रोजी किस्म में वह वैसे कहेंगे यह वही है जो हमने दिया था आगे इससे और लाई जावेगी उनके पास वह जगह रोज़ी मानिन्द एक दूसरे के और उनके वास्ते इस जगह औरात पाकी हूरें हैं और

यह हमेशा इस जगह रहेंगी। महाशयो! यवन मतानुयायियों ने ईश्वर की सृष्टि को गाजर मूली की भांति कुतरा है। और ईश्वर तथा ईश्वर के परोपकार को बहुधा मक्का निवासियों पर ही मुनहसिर (निर्भर) रक्खा है अतः यह मत भी संसार भर के लिये एकसा नहीं हो सकता। चौथी संख्या में ईसाई मत है। मैं (लेखराम) कह सकता हूं कि योरोप अफ्रिका तथा अमेरिका एवं ऐशिया के बहुत से स्थानों में अङ्गरेज़ों का राज्य है। और इन्हीं देशों में इस मत का कुछ २ प्रचार भी है परन्तु यह मत सम्पूर्ण जगत के लिये नहीं हो सकता अंग्रेज़ों ने जितनी उन्नति की है वह व्यापार से और व्यापार से धन प्राप्त हुआ है धन से संघशक्ति और संघशक्ति से राज्य को प्राप्त करते हुये राज्य सम्बन्ध की कार्यवाही में सब से बढ़कर उन्नति को प्राप्त किया परन्तु धर्म सम्बन्धी बातों में अधूरे और उसके सम्बन्धी सिद्धान्तों में कोरे हैं। बाइबिल के प्रथम पृष्ठ पर ही दृष्टि दीजिये जहां से ज्ञात होता है कि मसीह से ४००४ वर्ष पूर्व ६ दिन में संसार को रचकर आराम किया और परमेश्वर की आत्मा पानियों पर तैरती थी। प्रिय श्रोता गणो! इनके गणित से (४००४+१८८४)=५८८८ वर्ष अद्यावधि पृथिवी को बने हुये हुये--साथ ही आप टुक श्रीकृष्णचन्द्र, हरिश्चन्द्र, राजानल, तथा महाराजा रामचन्द्र जी के इतिहास की ओर ध्यान दें—परन्तु वह तो भला हमारे इतिहास ग्रन्थ हैं परन्तु यथार्थ में अंग्रेज़ी इतिहासों को भी देखिये मिस्टर ज्यालू साहिब ने सत्यता को न छुपाकर स्पष्ट अक्षरों में कह दिया कि "एक लक्ष वर्ष में एक हीरा उत्पन्न होता है" तो हे श्रोताओ!

ईसाई लोग अभी तक अपने मत सम्बन्धी इतिहास के ऊपर विश्वास रख सकते हैं।

बाइबिल के चौथे अध्याय की ओर आइये। ईश्वर शिक्षा आपके सन्मुख वर्णन करताहूं। "उसके अनन्तर जो मैंने निगाह की तो देखा कि आकाश पर एक दरवाजा खुलाहै। और पहिला शब्द जो सुना वह नरसिङ्गो का था। जिसने मुझसे कहा कि इधर उधर मैं तुझसे कुछ कौतुक दिखला ऊंगा जो इसके अनन्तर अवश्य होगा तब वहीं मैं रूह (जीवात्मा) में सम्मिलित हो गया फिर क्या देखताहूं कि आकाश पर एक सिंहासन धरा है और उसपर कोई बैठाहै और इस पर जो बैठा था वह देखने में यशब और अलीक (घनश्यामा) के समान था और एक धनक (धनुष) जो देखने में जमुर्रद के (स्वर्ण कान्ति) समान था उस सिंहासन के चारों ओर था और २४ अन्य सिंहासन भी उसके आस पास थे। प्रत्येक सिंहासन पर एक२ वृद्ध पुरुष श्वेत वस्त्र धारण किये हुये बैठा हुआ था। और एक२ सोने का मुकुट प्रत्येक के सिर पर था। बिजली और कठोर शब्द उन सिंहासनों से निकलते थे और दीपक उन सिंहासनों के समीप सोभायमान थे, यह ईश्वर की सात रुहें हैं और उन बड़े सिंहासन के आगे एक शीशे का समुद्र बिल्लौर के समान था सिंहासन के बीचो बीच और चारों ओर चार जीव धारी थे जो कानों से बहिरे थे। प्रथम जीवधारी सिंह के समान और तीसरा मनुष्य के समान और चौथा उकाब पक्षी के समान था और प्रत्येक के छह२ सिर थे और चारों ओर भीतर बाहर आखें ही आखें दीख पड़ती थीं और वह निश दिन नहीं ठहराते थे परन्तु कहते रहते कि

ईश्वर पवित्र और शक्तिमान था और है और होने वाला है और जब से जीवधारी उसके जो सिंहासन पर बैठा है और जो आदि अन्त तक जीता है। अत्यन्त उपासना करते हैं तब वह २४ वृद्ध पुरुष उस पुरुषके सामने जो सिंहासनपर बैठा है गिर पड़ते हैं और उसकी पूजा करतेहैं। और अपने मुकुट यह करते हुये उस सिंहासन के सन्मुख डाल देते हैं कि हे इश्वर तूही सर्वशक्तिमान् है। तूने ही सम्पूर्ण संसार के पदार्थों को रचा है। और वह तेरी ही शक्तिसे अद्यावधि उपस्थित हैं। प्रिय महाशयो! जब इनका ईश्वर ही परिमिति है और यशब और अक़ीक के चेहरेवाला सिंहासन पर बैठा है तो फिर ईसाई धर्म्म सार्वभौम धर्म्म कैसे हो सक्ता है। और जितनी पुस्तकें बाइबिल के प्रत्युत्तर में बनी हैं उनका उत्तर किसी पादरी ने अभीतक नहीं दिया हमें हज़रत लूत और मूसाके जीवन चरित्र पढ़कर आश्चर्य होता है मेरे विचार से बाइबिल की शंका निवारण होना कठिन है अब शेष रहे ब्रह्म-समाजी यह लोग इन बातों में न्यून ही नहीं किन्तु इन्हों ने अन्य पुरषों से मांग२ कर एक समुदाय बना लिया है सम्पूर्ण मनुष्य इस गिरोह में केवल अंग्रेज़ी भाषा के विद्वान हैं उनमें बहुधा ऐसे भी हैं जो भली प्रकार उपासना भी नहीं कर सक्के न अपना कर्तव्य जीवन ही बना सकते हैं प्रत्युत इसकी एक विशेष सुन्दर बात यह और है कि प्रत्येक समय इलहाम (आकाश वाणी) होना मानतेहैं। वह प्रत्येक पर होना सम्भव है इनका गुण औरढंग ही निरालाहै। उनका ध्यान यही है कि पुत्र विद्यायुक्त क्यों नहीं उत्पन्न होते? इस बात की वे परीक्षा किये हुये हैं कि जो धन पुरुषों का है वही राजा का है। ईसाइयों

की बातों पर लट्टू हैं परन्तु प्राचीनों के सिद्धान्तों तथा महात्माओं को सदैव उपालम्भ दिया करते हैं। ये मनुष्य ईश्वर को अनादि नहीं मानते। यही कारण है कि इनके मत भेदपर पुनः इलहाम की आवश्यकता है। बुद्धि को काम में लाने का प्रयत्न करते हैं परन्तु बिना विद्या के इस संसार में जिसकी लाठी उसकी भैंसवाली कहावत चरितार्थ करना चाहते हैं। वे प्रत्यक्ष आखों के लिये सूर्य कोतो मानते हैं। परन्तु आत्मिक शुद्धि के लिये प्राचीन ग्रन्थों को नहीं जानते। मानों इन्हें ज्ञान अथवा सत्य शिक्षा की आवश्यकता ही नही। प्रिय श्रोताओं क्या कोई मनुष्य इसे आलमगीर (सार्व भौम) धर्म्म कह सकता है। सार्व भौम धर्म के लिये आवश्यक है कि वह शंकाओं से रहित हो। परन्तु इन लोगों का इलहाम (अकाशवाणी) तो सर्कारी एकों की भांति बदलती रहती है। इन सब कारणों से यह धर्म भी हमारी सब शंकाये निवारण नहीं कर सकता। परन्तु प्यारे श्रोताओ? अब मुझे यह बतलाना है कि वह कौन सा धर्म है जो सार्वभौम धर्म सदासे है और रहेगा प्रथम इस बात पर विचार होना चाहिये कि जैसा उसका नाम सार्वभौम धर्म्म हो वैसा ही वह सर्वदा से हो अर्थात् उसमें उसके प्राचीन होने के प्रमाण भी मिल सकें। यतः (चूंकि) कई प्रकार से यह बात सिद्ध हो चुकी है कि भारतवर्ष की आबादी सब से प्रथम हुई। इसलिये यह सिद्ध होगया कि शिक्षा का आरम्भ यहीं से हुआ। संस्कृत भाषा जिसे अरबी भाषा में "उम्मुललसां" कहते हैं। सब भाषाओं की माता है। अतः संस्कृत की सम्पूर्ण पुस्तकों में सब से प्राचीन पुस्तक वेद है।

महाशयो ? ज्योतिष शास्त्रके गणित से १९६०८५२९४८ वर्ष व्यतीत होचुके जिसकी सत्यता प्रति दिन के संकल्प से भी प्रमाणित होती है। अब हमें विचारना चाहिये कि वेद क्या शिक्षा देताहै। ऋग्वेद अष्टक प्रथम मंत्र३-ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य और शूद्र चार वर्णों का ज्ञान कराता है। वेदों की रीत से इनके दो भेदहैं। प्रथम आर्य दूसरे दस्यु इस मंत्र में ईश्वर आज्ञा भी देताहै कि हे मनुष्य तू उत्तम स्वभाव, सुख आदि ज्ञानके उत्पन्न करने वाले व्यवहारों की शुद्धि के लिये एक आर्य्य अर्थात् विद्वान को जान। द्वितीय दस्यु अर्थात् पीड़ा करनेवाले अधर्मी दुष्ट मनुष्य हैं इनके भेद जान कर धर्म की शुद्धि के लिये दुष्टों का सामना कर और सत्य शिक्षा देने में सदैव तत्पर रह। यह उपदेश भी वेदके उस स्थल का है कि जहां सामाजिक प्रकरण में सभापति का वर्णन किया गया है। जब ऋग्वेद ही आर्य धर्म पर दृढ़ता दिलाताहै। तो अब हम को सत्य आत्मा से वेदों की शिक्षाओं को देखना चाहिये कि वह किस प्रकार के हैं। वेदों में वर्णन आता है कि "य आत्मदा बलदा" (जो ईश्वर आत्मा को बल प्रदाता है) हिरण्य गर्भः सम वर्त्तताग्रे (सृष्टि उत्पति से भी पूर्व परमेश्वर था) अग्नि मीड़े पुरो हितम (उस अग्नि स्वरूप परमेश्वर की स्तुति करते हैं) इत्यादि मंत्रों से कैसी उत्तम शिक्षा मिलतीहै। वह परमेश्वर विद्या की खानिहै। ज्ञान का सागर है। ऋषि मुनियों से लेकर आज तकके विद्वान इस बात को मुक्त कण्ठसे कहते हैं कि जितने ज्ञानकी मनुष्यों को आवश्यकता है वह सब वेदों में विद्यमान है अन्य पुस्तकों की भाँति इसमें कभी न्यूनाधिक नहीं कियागया वेद सर्वथा शंका रहित हैं। वेदों की शिक्षा किसी देश विशेष

पर निर्भर नहीं। किन्तु समस्त संसार के लिये एकसी है। अतः वैदिक धर्म्म के अतिरिक्त अन्य कोई सार्वभौम धर्म्म नहीं कहा जासक्ता। हमारे हिन्दुओं की हीन दशा का कारण केवल एक मात्र यही है कि वेदों से घृणा ईश्वरोपासना का त्याग, मूर्ति पूजा, स्त्री शिक्षा का अभाव, नियोग व पुनर्विवाहादि आपद्धर्म्मों का अवलम्बन। बाल विवाह। देशपात्र के बिना दान। एकताका अभाव वर्ण कर्म से नहीं किन्तु जाति से मानना इत्यादि है परन्तु जगदुपकारक श्री स्वामी-दयानन्द सरस्वती महाराज ने वेदों का भाष्य करके (संकृत मात्र) जो सत्य विद्याओं का पुस्तक है उपयुक्त अवगुणों को दूर करने का प्रयत्न कियाहै। और सत्य का भण्डार मनुष्य मात्र के लिये खोलदिया उस जगदीश्वर की कृपा कटाक्ष से अब दृढ़ विश्वास है कि सम्पूर्ण मिथ्या बांते हमारे भारत वर्ष से शीघ्र ही विदा होजावैंगी--इत्योम् शम्।

रावल पिंडी के उत्सव के पश्चात् पं० लेखरामजी लाहौर में आये और आर्यसमाज मन्दिर में उतरे। इस नगर में ठहर कर संस्कृत का अभ्यास करना आरम्भ किया यतः पं० जी फ़ारसी विद्या में पहिले ही पूर्ण निपुण थे और अरबी में पं० नारायण कौलजी के सत्सङ्ग से दक्षता प्राप्त करली थी अतः सब प्रकार से धर्म्म प्रचार की सामग्री एकत्रित करने में सदैव लगे रहतेथे

सुहृत्प्राप्ति

कुछ दिन पश्चात् पं० लेखराम जी अपने पूर्व परिचित सन्त दामोदरदास जी वेदान्ती के पास आये इन्हीं सन्त जी की संगति से पहिले पं० लेखरामजी के नवीन वेदान्तियों केसे भाव थे—इस अवसर पर सन्त जी ने कहा-बेटा सब ब्रह्म ही ब्रह्म है। इस पर

लेखराम जी ने कहा महाराज आप भी ब्रह्म हैं मैं भी ब्रह्म हूं यह पुस्तक भी ब्रह्म है। उत्तर में हां सुन कर पं० जी ने पुस्तक उठा ली और सन्त जी के मांगने पर पुस्तक न लौटाई और कहा कि ब्रह्म ने ब्रह्म को ले लिया और दूसरा कौन सा ब्रह्म है जिसे ब्रह्म ब्रह्म को दे देवे। यह पुस्तक अब तक पेशावर आर्य-समाज के पुस्तकालय में रक्खी हुई है।

मिर्ज़ाकादियानी

इस बीच में कुछ अब्दों से मिर्ज़ागुलाम अहमद साहिब क़ादियानीं ईश्वर वाक्य (इलहाम) का दावा करके मसीह मौऊद की पदवी लेनेके लिये हाथ पैर पसार रहे थे। पं० लेखराम जी मिरज़ा के लिये लिखते हैं कि मिर्ज़ा क़ादियानी जी ने एक "बुराहीन अहमदिया" की रचना के अतिरिक्त बढ़ावे के दश सहस्र मुद्रा पारितोषिक देने को स्वीकार कर अपनी पुस्तक की बड़ी प्रशंसा कराने का प्रयत्न किया है। परन्तु जब यह पुस्तक मैंने देखी तो यह ज्ञात हुआ कि जिस प्रकार दूर के ढोल सुहावने तथा सब सुथरे शाह कहलाते हैं इसी प्रकार हमारे मित्र मिर्ज़ा गुलाम अहमद की दशा है। और केवल ख्याली पुलाव के उसमें कुछ आशय नहीं। बुराहीन अहमदिया के कर्ता ने केवल रुपया प्राप्तिका एक नया ढंग निकाला है और आठ वर्ष समय को निरे धोखे में टाला है। अपनी पुस्तक में कहीं ब्रह्म समाज और कहीं ईसाईयों को गाली प्रदान कर साथ २ आर्यों को भी कोसते गये हैं। मुझे इस स्थान पर किसी अन्य मत से कुछ सम्बन्ध नहीं और न मैं किसी मनुष्य का ही अनुयायी हूं किन्तु आर्य वैदिकधर्म का अनुयायी हूं अतः वेदोक्त सत्यता को अपना धर्म जानकर

चाहता हूं कि धर्मरूपी तुला में रखकर सत्य के बाटों से 'बुराहीन अहमदिया' को तौलूं। इसके अनन्तर जब पं० जी दुबारा जम्बू को गये तो पं० नारायण कौल जी के यहां उतरे। उक्त पं० जी एक विद्वान् पण्डित होने के कारण फ़ारसी तथा अरबी भाषा में भी बड़े निपुण थे। पं० लेखराम जी को भी वार्तालाप करते २ उनकी फ़ारसी की विद्वत्ता प्रकट हुई तो उन्होंने उक्त पं० जी से बुराहीन अहमदिया के उत्तर देने में सहायता लेनी उचित समझकर पूछा तो उन्होंने बड़ी प्रसन्नता तथा भक्ति भाव से स्वीकार किया। पं० नारायण कौल जी के सम्बन्धियों से यह भी ज्ञात हुआ कि उक्त पं० जी ने लेखराम जी को पुस्तक लिखने में बड़ी सहायता दी थी। मिर्ज़ा गुलाम अहमद के बड़े चेले हकीम नूरुद्दीन उन दिनों जम्बू में ही अपना प्रचार कर रहे थे परन्तु पंडित लेखराम जी के जम्बू आने जाने के कारण अधिकांश में उन्हें सब कामों में असफलता होती रही।

पं० लेखराम जी की ओर से मिर्ज़ा गुलाम अहमद क़ादियानी को घोषणा।

जब सम्पूर्ण पुस्तक बुराहीन अहमदिया के प्रति उत्तर में "तक़जीब बुराहीन अहमदिया" नामक तैयार होगई तो प्रथम पं० जी ने १ अक्टूबर १८८४ ई० को उसको गुरुदास पुर नगर की आर्य समाज में सुनाया इसका कारण केवल छपने में देर न हो और नगर के प्रतिष्ठित पुरुष जो अच्छे कामों में सदैव सम्मिलित रहते हैं और परोपकार की बातों में मन लगाते हैं इस कार्य में थोड़ी २ सहायता करें और कार्यसिद्धि में प्रयास

करें—क्योंकि दूसरों को लाभ पहुंचाना और भूले हुओं को सन्मार्ग बताना अति उत्तम कार्य है। परन्तु उस घोषणा का कोई उत्तर न आया और नाहीं मिर्ज़ा क़ादियानी साहिब ही शास्त्रार्थ के लिये पधारे इसके अनन्तर उन्होंने लाहौर जाने का विचार किया और ईश्वर पर भरोसा कर उसी ओर प्रस्थान किया। यहां पर कुछ विश्राम कर अमृतसर को चले गये और यहां दो मास तक ठहरे।

क़ादियान में जाना

सन् १८८५ के आरम्भ में पं० लेखराम जी द्वितीय वार क़ादियान में गये और वहां के सम्पूर्ण निवासियों को बुराहीन का खंडन पहिले मिर्ज़ा साहिब की शंकाओं से फिर अपनी पुस्तक से मौखिक किया। जिससे वहां के प्रत्येक बालक तक मिर्ज़ा साहिब की सत्यता और पोल जान गया। कादियान जाने के निम्न लिखित कतिपय कारण थे (१) मिर्ज़ा साहिब ने एक विज्ञापन इस विषय का दिया था कि जो आर्य पुरुष हमारे पास आवे और एक वर्ष तक निवास करे। यदि इस समय के भीतर उसके कर्मदीन इस्लाम से सम्मिलित न हों तो हम उसको २००) मासिक हानि के देंगे। (२) वहां आर्य समाज भी न था। उसका होना भी इस नगर में आवश्यक था प्रायः मिर्ज़ा साहिब ने ठीक २ उत्तर न दिया इसलिये भ्रमण करते हुये वहांही जाना उचित समझा गया और ठीक २ मास वहां ठहरे इन्हीं दिनों परमात्मा की कृपा से आर्य समाज भी स्थापित होगया—और प्रतिदिन वेदों का उपदेश होने लगा। लेखराम जी का कथन है कि मैं तीन बार मिर्ज़ा जी के घर पर गया परन्तु वह किसी नियम

क़ादिया में आर्य समाज स्थापन

पर आरूढ़ न पाये गये। मैंने दो वर्ष तक रहने को भी अंगीकार कर लिया परन्तु मिर्ज़ा साहिब इस पर भी न जमे। एक दिन जब कि मिर्ज़ा जी के गृह पर बैठा हुआ था। कुछ थोड़े से प्रतिष्ठित आर्य और मुसलमान भी बैठे हुये थे। मिर्जा जी करामाती जाल फैलाने लगे और कहा कि मुझे फ़रिश्ते दिखाई देते हैं मैंने कहा कि मिर्ज़ा जी क्या आप सत्य २ कहते हो। उन्होंने कहा कि हां सत्य कहता हूं मैंने एक पत्र पर पेंसिल से ओ३म् लिखकर अपने हाथ में रख लिया। और पूछा कि कृपा करके फ़रिश्तों से पूछिये कि मैंने क्या लिखा है? थोड़ी देर मनही मन गुनगुनाते रहे और फिर कहा इस प्रकार नहीं किसी अन्य स्थान में पत्र को रख लो? मैंने अपने पाकट में रख लिया—फिर जब पूछा तो कुछ काल तक अपने फ़रिश्तों से पूछते रहे परन्तु कुछ न कह सके। इस बात के दश बारह मनुष्य साक्षी हैं। और मिर्ज़ा जी भी स्वयं जानते होंगे। पं० लेखराम का गुरुदासपुर और कादियान में तकज़ीब बुराहीन अहमदिया के सुनाने, दो मास तक कादियान में ठहरने और यवन मत की पोल खोलने से इतना तो अवश्य हुआ कि अन्य पुरुषों का इक्कों पर बैठ कर आना और समाधों पर भेंट चढ़ाना बिलकुल बन्द हो गया—अन्त को पं० लेखराम जी की वह पूंजी जो उन्होंने नौकरी के समय संचय की थी व्यय हो गई। और शेष अन्यत्र से प्रबन्ध कर अम्बाले की ओर पधारे। इस स्थान पर पहुंचने से हमारे चरित्र नायक को विदित हुआ कि "क़ादियान" के

करामात या ढकोसला

कबरों की पूजा का बन्द होना

"विष्णुदास" नामक हिन्दू को बुलाकर मिर्ज़ा जी ने कहा है यदि वह एक वर्ष के भीतर यवन मत न ग्रहण कर लेगा तो उनके इलहाम के मुताबिक वह मर जायगा यह समाचार सुनकर ४ दिसम्बर सन् १८८५ को पं० जी कादियान में बिजुली की भांति जा दमके और विष्णुदास को बुला कर बहुत समझाया। व्याख्यानों द्वारा मिर्ज़ा जी की कलई खोलने में कुछ उठा न रक्खा। परिणाम यह हुआ कि वह मुसलमान होने के स्थान में आर्य-समाज का सभासद बन गया और मिर्ज़ा जी की बहुत सी कुटिल नीति का निराकरण करने पर आरूढ़ हो गया।

सन् १८८६ ई० के मार्च मास में मिर्ज़ा गुलाम अहमद का किसी कार्य वश होशियारपुर में आना हुआ। स्थानिक गवर्नमेंट हाईस्कूल के ड्राइङ्ग मास्टर महाशय मुर्लीधर जी भी यवन मत की पोल खोलने में अद्वितीय थे। मास्टर साहब ने मिर्ज़ाजी की डींग की बातें सुनकर ता० ११ मार्च सन् १८८६ की रात्रि को मिर्ज़ाजी के स्थान पर पहुंचकर मुहम्मद साहिब के चांद के दो टुकड़े करनेवाले चमत्कार पर लेख बद्ध आक्षेप किये। अनुमान से ६ घंटे तक प्रश्नोत्तर होते रहे। परन्तु अन्त को ता० १४ मार्च सन् १८८६ ई० के दिन मिर्ज़ा जी ने प्रकरण छोड़ कर यह प्रतिज्ञा की कि जीवात्मा अनादि नहीं है किन्तु हादिस (उत्पत्तिवान है) इस पर भी बड़ी देर तक शास्त्रार्थ होता रहा। परंतु यतः मिर्ज़ा जी का होशियारपुर में आना केवल रुपये बटोरने के लिये हुआ था। इस समय को अच्छा समझ कर एक पुस्तक "सुर्माचश्म आरिया" लगभग २६० पृष्ठों की लिखकर छपवा डाली। हमारे चरित्र नायक के चित्त पर इसका बड़ा

आघात हुआ। परन्तु यह सोचकर कि कदाचित् उक्त मास्टर जी ही उसका खण्डन छपवा लेंगे छपने के समय की प्रतीक्षा करने लगे। इसके अनन्तर २५ अप्रेल सन् १८८६ ई० को पं० लेखराम जी ने पेशावर आर्य-समाज के पंचम वार्षिकोत्सव पर जाकर एक प्रभावशाली व्याख्यान दिया। और १० अक्टूबर सन् १८८६ ई० मेरा आर्य-समाज के वार्षिकोत्सव में सम्मलित हो वहां "हवन के लाभ" पर एक प्रभावशाली व्याख्यान दिया। १६ अक्टूबर सन् १८८६ ई० की आर्य पत्रिका में एक महाशय लिखते हैं कि "लेखराम आर्य-समाज लाहौर का एक कट्टर मेम्बर है। उसने अपनी सम्पूर्ण अवस्था को आर्य समाज पर बलिदान कर दिया है। और अर्बी तथा फार्सी भाषा का बड़ा विद्वान् है इसने अमृतसर नगर के वार्षिकोत्सव पर अन्य मतों पर एक बड़ा प्रभावोत्पादक व्याख्यान दिया। और इन्हीं के परिश्रम से खतोया नगर के पुरुषों ने अपने गांव में आर्य-समाज स्थापन की। इसके अतिरिक्त, मियानी, पिण्डदाद खां, आदि नगरों में बड़े २ व्याख्यान दिये। मजीठ नगर में लाला गण्डामल असिस्टेन्ट इंजीनीयर को आर्य समाज की सत्यता पर विश्वास दिलाया और अब वह कश्मीर देश को शास्त्रार्थ के लिये जा रहा है" इन्हीं दिनों पं० जी ने निम्न लिखित पुस्तकों का लिखना आरम्भ किया—(१) माहिबत ऋग्वेद नामक पुस्तक जो प्रतिपक्षियों की ओर से ऋग्वेद के खण्डन में लिखी गई थी उसका" सदाक़त ऋग्वेद नामक प्रत्युत्तर लिखा—(२) आईना इंजील के प्रत्युत्तर में इंजील की हक़ीकत—(३) तहक़ीक याने हक़ के उत्तर में "सच्चे धर्म्म की शहादत—(४) शहादत अहिवाल ६ खण्डों में—(५) मूर्ति

प्रकाश—(६) स्त्री शिक्षा—(७) इतर कहानी जो गुलाब व चमन के उत्तर में लिखी गई थी।

जब पं० लेखरामजी की प्रतीक्षा करते हुये कुछ समय व्यतीत हो गया और जुलाई सन् १८८७ ई० में "तकज़ीब बुराहीन अहमदिया" का पहिला भाग भी छप कर जन साधारण में हाथों हाथ बिक गया—तो हमारे धर्म वीर जी ने पता लगवाया कि मास्टर जी ने उस पुस्तक का उत्तर अभी तक क्यों नहीं छपाया। तो ज्ञात हुआ कि मास्टर जी को सर्कारी नौकरी के कारण इतना अवकाश नहीं कि वह उत्तर लिख सकें। अन्त को उन्होंने स्वयं ही मिर्ज़ा जी के सब आक्रमणों का उत्तर लिखना आरम्भ कर दिया और पुस्तक का नाम "नुसख़ा खब्त अहमदिया" रक्खा इस पुस्तक के लिखने में पं० धर्म्मचन्द्र जी प्रधान आर्य-समाज अमृतसर ने बड़ी सहायता की। जिसके कारण पं० जी का यश तथा वैदिक वैजयन्ती की ध्वनि समस्त भारतवर्ष में गूंज उठी।

सन् १८८७ के आरम्भ में पं० लेखराम जी को आर्य्य गज़ट फ़ीरोजपुर का सम्पादक बनाया गया। और अनुमान दो वर्ष तक उसका सम्पादन बड़ी योग्यता से करते रहे। जहां पं० लेखराम जी के ऊपर गज़ट के सम्पादन का भार आपड़ा। वहीं उन्हें समय २ पर आर्यसमाजों के वार्षिकोत्सव पर भी आना जाना पड़ता था। इस कारण पं० जी को अवकाश न मिलता और अहर्निशि धर्म्म के कामों में लगे रहते थे। ता० १२ अप्रेल १८८८ ई० को मुल्तान आर्य-समाज में यह प्रस्ताव प्रविष्ट हुआ कि श्री १०८ श्री स्वामी दयानन्द जी महा-

स्वामी दयानन्दजी के जीवन चरित्र की सामग्री संचय

राज के जीवन की घटनायें तथा वृतान्त संग्रह करने को पं० लेखराम जी नियत किये जावें। इसके अनन्तर यही प्रस्ताव श्रीमती आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की अन्तरङ्ग सभा में भी प्रविष्ट किया गया और सभा ने शीघ्र ही स्वीकार कर लिया। मानो पं० जी को धर्मवीर के स्थान में आर्य पथिक बना दिया गया निदान नवम्बर सन् १८८८ ई० से आर्य-पथिक लेखराम जी ने स्वामी जी के जीवन वृतान्त एकत्रित करने का कार्य आरम्भ कर दिया। महर्षि दयानन्द का जीवन चरित्र शीघ्र ही जनता के सन्मुख पहुंच जाता और वृतान्त भी भले प्रकार के वर्णन किये जाते। यदि यह कार्य किसी ऐसे पुरुष को दिया जाता जो उपदेश के कार्य से मुक्त होता। यह बात कौन पुरुष नहीं जानता कि पं० लेखराम जी को प्रत्येक समय उन्नति का ध्यान रहता था जो एक स्थान पर उनको कभी बैठने नहीं देता था। यदि उन्होंने कदाचित् यह सुन लिया कि अमुक पुरुष ईसाई अथवा यवन मत ग्रहण करता है तो शीघ्र ही अपने आवश्यकीय कार्य्यों को छोड़ कर वहां पहुंच ना अपना औचित्य (फर्ज़) समझते थे। यही कारण था कि लगातार चलते हुए मत सम्बन्धी बातों को सुनकर बीच में उसी स्थान पर ठहर जाते थे चाहे कार्य की पूर्णता में देर हो क्यों न होजाय। इसी कारण आर्यप्रतिनिधि सभा भी उनसे चूं न करती थी। परन्तु उन दिनों पं० लेखरामजी के अतिरिक्त कोई ऐसा योग्य पुरुष न था जो इस काम को कर सकता। परन्तु कहा जा सकता है कि लगातार प्रचार के कार्य में प्रवृत्त रहते हुये और शंका समाधानों में फंसे रहते भी जो वृतान्त पं० लेखरामजी ने संग्रहकर पाये थे वह किसी

लगातार काममें लगे हुये मनुष्य सेभी होसकने कठिन थे। यद्यपि आर्य प्रतिनिध सभाने पं० लेखरामजी को जीवन वृतान्त संग्रह करने में शीघ्रता करनेके लिये कई तार दिये। परन्तु उस धर्मवीर ने धार्मिक प्रचारको कभी ठंडा न रक्खा एक समय की बात है कि पं० जीने सुना कि अमुक स्थान पर शास्त्रार्थ होगा। पं० जी बिना आर्य-प्रतिनिध सभाकी आज्ञा के वहां चले गये और यवनों तथा ईसाइयों से शास्त्रार्थ किया लौटने पर सभाकी ओर से कई आक्षेप हुये पं० लेखराम जी ने निस्वार्थ भाव से कह दिया कि जो दिन मैंने शास्त्रार्थ में अपनी ओर से दियेहैं। उतने दिनों का वेतन सभासे न लूंगा।

२८ दिसम्बर सन् १८८८ ई० को लाहौर आर्यसमाज के उत्सव पर जाकर वहां बड़ी योग्यता से शंका समाधान किया। और विदा होकर मथुरा में पहुंचे वहां महात्मा विरजानन्द के अन्य शिष्यों से मिले उस समय दण्डी जी के शिष्यों में पं० दामोदर जी, युगुल किशोर जी तथा हरिकृष्ण जी थे उन से स्वामी जी के जीवन के वृतान्त पूछे और अन्य२ स्थानों में भी भ्रमण करते रहे तदन्तरः—

ता० २ अक्टूबर सन् १८८९ ई० को आर्यसमाज पेशावर के वार्षिकोत्सव पर पुनः पधारे। उत्सव समाप्त होने पर डाक्टर सीताराम जी मंत्री आर्यसमाज पेशावर ने पं० जी के साथ एक ऐसा ठट्ठा किया अर्थात् उनके निवास के लिये एक एक ऐसे गृह का प्रबन्ध किया कि जिसमें सर्प बहुत रहते थे और कहाकि पं० जी आप बहुत कहा करतेहैं कि हवन करनेसे कोई भय नहीं रहता अतः इस सर्प युक्त गृह में निवास कीजिये फिर देखें आप कैसे रहसक्ते हैं। पं० लेखराम जीने उस दिन

तो ताला लगा दिया। दूसरे दिन जब पं० जी के नौकर ने ताला खोला और मकान में घुसे तो उसने कई सर्प देखे। वह देखकर भागा और पं-जीके पास गया और कहने लगा कि महाराज मकान में तो बहुत से सांप हैं। इस बात को सुनकर पं० जी ने उस घर में जाकर हवन किया और उसमें एक और भांति की आहुतियें दीं और फिर घर को बन्द करदिया। दूसरे दिन जब घर को खोला तो हवन की भस्म पर बहुत से सर्पों को अचेत पड़ा पाया। शीघ्र ही पं० जी ने उन्हें पकड़वा कर जंगल में छुड़वा दिया। और नवम्बर सन् १८८९ में देहरादून में जाकर एक व्याख्यान "पुराण खंडन" पर दिया। इधर मुं० पूर्णचन्द्र जी से और पं० लेखरामजी से मिलाप हुआ और २१ दिसम्बर १८८९ ई० को जो प्रश्न मुंशी पूरनचन्द्र जी ने पं० लेखरामजी से किये थे उनके उत्तर पं० जी ने बड़ी योग्यता से निम्न लिखित अनुसार दिये।

सर्प यज्ञ करना

प्रश्न—स्वामी दयानन्द सरस्वती और स्वामी शंकराचार्य्य जी की तसनीफ़ (रचना) में क्या भेद है ?

उत्तर—देखो सत्यार्थ प्रकाश ७ वां समुल्लास पृष्ठ १९१ और ११ वां समुल्लास पृष्ठ २९० से २९८ तक।

प्रश्न—ब्रह्म जो सर्वत्र सब पदार्थों में स्थित है फिर यदि वेदान्तियों ने अपने में ही मान लिया तो क्या बुरा किया ?

उत्तर—श्रीमद्भगवतगीता के सिद्धान्त के विरुद्ध सर्वव्यापक को एक देशीय मानना और स्वयं ईश्वर बन बैठना तथा संसार को मिथ्या कहना और ब्रह्म में अविद्या का आवरण मान कर अज्ञानी कहना कहां तक न्याय संगत है।

इसके अतिरिक्त उपकार, विद्या और सत्ययोग को छोड़ कर मिथ्या पाखंड का प्रचार आर्षग्रन्थों को कलंकित कर आर्य्यत्व को धब्बा लगा देना जीव और ब्रह्म की एकता का वेदान्त शास्त्र विरुद्ध उपदेश करना अयोग्य है जिस वेदान्त शास्त्र पर महर्षि बौधायन कृत भाष्य कि जिसका प्रमाण रामानुज स्वामी ने भी दिया है और स्वामी जी ने भी जिसको माना है उसे झूंठा कहना बड़ा अनर्थ है। चारों वेद और दशों उपनिषदों में जिनमें कि जीवेश्वर अभेदवाद की गन्ध तक नहीं परन्तु नवीन वेदान्तियों ने स्वार्थवश सब के विपरीत अर्थ कर महान अनर्थ किया है अतः इनका मत वेदानुकूल कदापि नहीं कहा जा सकता।

प्रश्न—"एको ब्रह्म द्वितीयोनास्ति" यह वेद की श्रुति है अथवा नहीं? यदि है तो इसका क्या अर्थ है।

उत्तर-जहां तक मुझे वेदों का ज्ञान है यह वेद की श्रुति नहीं है।

प्रश्न—आत्मा, परमात्मा और जीवात्मा तीन नाम ईश्वर के कैसे हुये?

उत्तर—यह प्रश्न शुद्ध नहीं है? यदि अलख मुराद ईश्वर से है तो आप जीवात्मा नाम इसका कभी न देखेंगे। आत्मा ईश्वर का नाम इसलिये है कि वह सर्वव्यापक है। *जीव से परमात्मा इस कारण भिन्न है कि उसकी पहिचान हो सके। जीवात्मा या जीव ब्रह्म का कभी भी नाम नहीं हो सकता। ब्रह्म, अलख, और परमात्मा का नाम कहीं २

* देखो निरुक्त अध्याय ३ मं ५

आया है परन्तु आत्मा (जीव) कहीं नहीं आया।

प्रश्न—राम और कृष्ण का नाम जो बहुधा हिन्दू लोग जपते हैं इससे क्या मुराद है। क्या दशरथ महाराज के पुत्र राम तथा बसुदेव जी के पुत्र कृष्ण चन्द्रजी ही का बोधक है अथवा कुछ और भी अर्थ है ?

उत्तर—राम और कृष्ण का अर्थ केवल दो नामों काही बोधक है कि जिनका उससे सम्बन्ध है कहीं २ यह नाम बलराम तथा परशुराम के भी हैं। और कृष्ण नाम व्यासजी का भी है। परन्तु रामानुज स्वामी से पूर्व "राम" नाम और बोपदेव से पूर्व "कृष्ण" नाम कभी भी ईश्वर के परियाय में प्रयोग नहीं किया गया। हिन्दू लोग कुछ ही अर्थ करें परन्तु मेरे विचार से कौशल्या के पुत्र राम तथा देवकीसुत कृष्ण के ही नाम को जपते हैं ईश्वर के नाम को नहीं।

प्रश्न—पहिले जब आर्य गज़ट फीरोज़पुर से निकलता था तो उसके आरम्भ में एक वेद मन्त्र अर्थ सहित लिखा जाता था पश्चात् क्यों बन्द हो गया।

उत्तर—प्रेस में कोई शुद्ध लिखनेवाला पण्डित न था।

प्रश्न—यदि कोई आर्य वेद विरुद्ध कर्म्म करे तो उससे क्या कहना चाहिये।

उत्तर—प्रश्न आपका ठीक है परन्तु अभी आर्य पुरुष क्षमा के योग्य हैं क्योंकि योग्य उपदेशों तथा उपदेशकों का अभाव है। कुछ समय देना चाहिये। हां यदि जान बूझ कर कोई वेद विरुद्ध करे तो वह अवश्य डबल पोप है—

लेखराम—बुलन्दशहर

इन दिनों पं० जीने निम्नलिखित पुस्तकें और बनाईं

(१) सदाक़त इलहाम (२) पुराण किसने बनाये (३) देवी भागवत समीक्षा (४) सांच को आंच नहीं (५) हिन्दू आर्य नमस्ते की तहक़ीकात (६) धर्म्म प्रचार। इस समय पं० जी ने पंजाब देश में लगभग सर्वत्र भ्रमण कर वैदिकधर्म की दुन्दुभी बजाई। इसके अतिरिक्त पश्चिमोत्तर देश के भी मुख्य २ नगरों में भ्रमण किया और स्वामी जी के जीवन वृत्तान्त की सामग्री एकत्रित की।

ऋषि अन्वेषण के लिये यात्रा

अगस्त सन् १८६० ई० में पं० लेखरामजी जालन्धर नगर में पधारे वहां जाने पर उन्हें ज्वर आगया अतएव कुछ दिन शान्ति सरोवर पर ठहर कर पुनः यात्रा आरम्भ की। जालन्धर से चलकर पं० लेखराम जी अक्टूबर सन् १८६० ई० को कानपुर में पहुंचे और वहां कई प्रभावशाली व्याख्यान दिये जिनमें "सृष्टि उत्पत्ति" विषयक बड़ा उत्तम व्याख्यान था।

कानपुर से चलकर पं० लेखराम सीधे प्रयाग पहुंचे। उन दिनों वैदिक यंत्रालय इसी स्थान में था और प० भीमसेन तथा ज्वालादत्त भी उसमें काम करते थे। यहां पं० लेखराम जी एक मास तक सब पत्र व्यवहार देखते रहे पं० जी ने एक दिन वहां एक बड़ी विचित्र लीला देखी कि वेद भाष्य का एक छपा हुआ अङ्क जला दिया गया और उसका शंसोधन कराकर फिर से छपवाया गया था। यह देख पं० लेखराम जी ने हलचल डाली जिसका यह परिणाम हुआ कि वेदभाष्यके अंकों केअवलोकन का भार कतिपय प्रसिद्ध आर्य पुरुषों पर डाला

गया। यहाँ से चलकर पं० जी मिर्ज़ापुर के वार्षिकोत्सव पर गये वहाँ २४ अक्टूबर सन् १८९० ई० को आपका उत्सव में व्याख्यान हुआ। वहां के सभासद आपके बड़े भक्त बन गये निदान एक दिन एक आर्य सभासद को जो जाति से कलवार थे पं० जीने उन्हें समझाया कि भाई जब आप वैश्य का काम करते हो तो यज्ञोपवीत क्यों नहीं धारण कर लेते उससे वंचित रहना अच्छा नहीं। सभासद्ने उत्तर दिया—महाराज मेरा यज्ञोपवीत यहां कौन करायेगा? प० जी ने उत्तर दिया कि "मैं कराऊंगा। देखूं कौनसा आर्य समाजी पंडित है जो सम्मिलित न होगा। बस फिर क्या था नगर के प्रसिद्ध २ पुरुषों को आमन्त्रित किया गया और एक तिथि निश्चित कर सभासद का यज्ञोपवीत कराया गया जिसमें विशेषता यह थी कि नगर के दो ब्राह्मणों अर्थात् पं० घनश्याम शर्मा तथा पं० रामप्रकाश जी ने इस संस्कार में सहयोग दिया और वे अपने ऊपर भाई बान्धवों के आक्षेपों का कुछ भी विचार न कर धर्म-संस्कार में दृढ़ता पूर्वक सम्मिलित रहे। यहां से चलकर पं० जी काशी जी पहुंचे और धर्मचर्चा करते रहे। जनवरी सन् १८९१ ई० को काशी से प्रस्थान कर डुमरांव राज में निवास करते हुये ता० १७ जनवरी १८९१ के दिन दानापुर पहुंचे और ता० १७ से १२ फ़रवरी तक दानापुर, बांकीपुर और पटना ही में कार्य करते रहे।

डा० मुन्नी लाल का शाह से पंडितजी वार्तालाप

पटने में पहुंचने पर पं० लेखराम जी डा० मुन्नीलालशाह के यहां एक सप्ताह तक ठहरे। स्वामी जी के जीवनचरित्रका संग्रहकरने के लिये इन्हें बहुत से स्थानों में जाना पड़ा

डाक्टर साहब का कहना है कि उन दिनों मैं मेडीकल कालेज में पढ़ता था। एक दिन पं० जी ने मुझ से कहा कि महाशय ? यहां कोई ऐसा पुस्तकालय भी है कि जिसमें ऐसा हस्तलिखित कुरान मिले कि जिसमें ४० अध्याय हों क्योंकि मुझे ज्ञात हुआ है कि उसके अन्तिम १० अध्याय यवन मत के विरुद्ध हैं— और कहा कि मैंने यह पुस्तक पंजाब में ढूंढ़ी परन्तु कहीं खोज न मिला। इसके अनन्तर मैं पं० लेखरामजी को मौलवी खुदा बख़्श के प्रसिद्ध पुस्तकालय में ले गया। वे और मैं दोनों एक कमरे में चले गये। पं० जी ने जाते ही मौलवी साहिब से उक्त पुस्तक के विषय में पूंछा उन्होंने उत्तर दिया कि जी हां एक पुस्तक है। इस पर पं० जी बड़े अचम्भित हुये कि ऐसा पुस्तक यहां कहां से आई। मौलवी साहिब ने पुस्तक देते समय कहा कि यह पुस्तक बड़ी कठिनतासे प्राप्त हुई थी, कहा कि एकबार एक मौलवी शाह ईरान के मन्त्री के साथ काबुल आया। मेरे एक मित्र ने जो वहां नौकर थे पूछा कि आप ने कभी ऐसा कुरान देखा है कि जिसमें ४० अध्याय हों। उसने कहा कि मेरे पासही है। और कुछ वार्तालाप करने के अनन्तर उन्होंने वह कुरान की पुस्तक २५) रु० को मेरे मित्र को बेच दी। ज्योंही कुरान पं० जी को दिया गया उन्होंने शीघ्र ही उसका पढ़ना आरम्भ कर दिया और बड़ी शीघ्रता से उसकी आवश्यक बातों को नक़ल करने लगे।

पं० जी उसके कार्य से बड़े प्रसन्न हुये। और मेरी बड़ी सराहना की पुनः दूसरे दिन उसी स्थान पर गये और शेष १० अध्यायों में से मुख्य २ बातों को नोट कर लिया और अन्य

पुस्तकों को भी देखा और मेरे साथ घर पर लौट आये। इतने में अनायास मेरे पास एक तार आया कि पंडितजी जीते हैं या नहीं यह तार उन के घर से आया था। विदित होता है कि उनकी माता को किसी ने यह सूचना दे दी थी कि लेखराम का देहान्त होगया। पं० जी तथा डाक्टर साहिब में इस विषय में बातचीतहोने लगी।

पं० लेखराम जी—मेरे मित्रों और सम्बन्धियों को मेरे देहान्त के बारे में पूर्व भी तार भेजे गये हैं और आजका तार भी उसकाही उदाहरण है।

डाक्टर जी—आप ऐसे बदमाशोंका कुछ इलाज क्यों नहीं करते।

पं० जी—डाक्टर साहिब! मैंने वैदिक धर्म की सत्यता के कारण बहुत से शत्रु बढ़ा लिये हैं और यह भी आशा है कि कोई मुसलमान मुझे कतल भी करेगा।

डाक्टर जी—आप ऐसी बातें न करें सब का ईश्वर मालिक है। कोई कुछ नहीं कर सकता। परन्तु आपको इसका यत्न अवश्य करना चाहिये।

पं० जी—यह सब ठीक बात है परन्तु आप यवनों के स्वभाव से परिचित नहीं हैं। वे मत सम्बन्धी बातों पर कभी कुछ ध्यान नहीं देते और पक्षपात से अन्धे होकर अपनी ही पुस्तकों को सत्य कहते हैं, जहां उनकी पुस्तकों का खण्डन किया झट आपे से बाहर हो जाते हैं। परन्तु हमें इस कठिनाई को कठिनाई न समझ वह पुरुषार्थ करना चाहिये देखिये मैं कुछ उपाय सोच रहा हूं.....कि.....

डाक्टर जी—पं० जी आप क्या सोच रहे हैं?

पं० जी—कुछ बातें सोच रहा हूं जिनको अभी प्रकट करना

इस समय उचित नहीं समझता हूं।

डाक्टर जी—क्या आप का विश्वास मुझ पर नहीं! क्या मैं उन्हें दूसरों पर प्रकाशित कर दूंगा?

पं० जी—नहीं २ यह मेरा विश्वास नहीं है। आप सच्चे वैदिक धर्मावलम्बी हैं। हां यदि आप पूछना ही चाहते हैं, तो तुम्हें बतलाये देता हूं कि मेरी इच्छा अन्य देशों में जाकर वैदिक धर्म के प्रचार करने की है। परन्तु मैं पहिले श्री स्वा० जी की जीवनी पूर्णकर लूंगा तब पूर्व संकल्प का अनुष्ठान करूंगा अन्यथा मुझे कर्त्तव्य हीन कहने लगेंगे। परन्तु आप मेरी इच्छा को अभी किसी पर प्रगट न करें

डाक्टर जी—आप को ऐसा भयानक संकल्प नहीं करना चाहिये।

पं० जी-मेरी इच्छा है कि मुझे कितनी ही कठिनाइयां सहनी पड़ें। परन्तु मैं अपने इरादे से न हटूंगा। यद्यपि हम यह जानते हैं कि सत्य धर्म संसार भर का एक है। मान भी लो कि यदि किसी मूर्ख ने मुझे क़तल भी कर दिया तो वैदिक धर्म का महत्व और भी अधिक बढ़ जायगा। क्योंकि आर्यधर्म के अनुयायी बहुत सा मेरा काम अपने अपने हाथों में लेने के लिये उस समय बाहर निकल आवेंगे। और यवन देश में वैदिकधर्म का प्रचार करनेको उद्यत होंगे। इस लिये मुझे अपने जीवन की इच्छा न करते हुये वैदिकधर्म के महत्व पर तत्पर रहना चाहिये

डाक्टर जी-इस समय तो आप स्वामी जी के जीवन वृतान्त को पूरा करने ही में पूरा ध्यान दें।

पं० जी०—यह तो अवश्य ठीक है। मैं भी यही चाहता हूं कि

यह कार्य्य शीघ्रही समाप्त होजावे—और सत्यार्थ प्रकाश का भी अर्बी भाषा में अनुवाद होजावे।

डाक्टरजी—आप अपने कथन के अनुकूल यदि यवन देश में वैदिक मत के प्रचार को गये भी तो क्या काबुल, अरब, ईरान और मिश्र आदि देशों में भी जाइयेगा ?

पं० जी—जी हां-मेरे कहने का तात्पर्य यही तो था। परन्तु मुझे आशा नहीं कि मैं अपने संकल्प को पूरा कर सकूं। क्योंकि मेरा अनुभव है कि कहीं इसी देश में ही क़तल न किया जाऊं।

डा०-क्या मैं पूछ सकता हूं कि आपने सत्य धर्म रूपी वैद्यक में कितनी निपुणता प्राप्त की है।

पं० जी—मैंने कतिपय असाध्य रोगों के लिये कई उपयोगी नुसख़े (चुटकले) इकट्ठे करलिये हैं और इतना कह उन्होंने अपनी नोट बुक निकाल कर कहा कि आप देख सकते हैं।

दूसरे दिन हम लोग खड्ग विलास यन्त्रालय में गये और

खड्ग विलास प्रेस में जाना

वहां "कवि वचन सुधा" नामक पत्र को-जिसे भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्रजी सम्पादन करते थे देखने की इच्छा की। यंत्रालय के प्रबन्धकर्त्ता ने बड़े प्रेम पूर्वक उसका फ़ायल (नत्थी) देखने को दिया-जिसमें से स्वामीजीके जीवन वृत्तान्त सम्बन्धी बहुत सी बातोंका पं० जी ने टिप्पणी में उल्लेख कर लिया, इस पत्रमें हुगली का शास्त्रार्थ भी छपा था।

इसके पश्चात् बा० रामप्रसाद जी के साथ हम देवालय में गये जहां परमेश्वर के निराकार होने पर शास्त्रार्थ छिड़

रहा था। बहुतसी बातें होने के अनन्तर पं० जी ने निराकार न माननेवाले पुरुषों को अच्छे प्रकार समझाया और व्याख्यान भी इसी विषय पर दिया। इसके अनन्तर पं० जी ने कलकत्ते जाने का विचार किया और वहां एक सप्ताह ठहरे। एक दिन पं० जी की दो पुरुषों से बातचीत सुनकर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ पं० जी ने मुझे पूछने पर बतलाया कि पठान आर्य्य हैं।

स्वर्णरेखा नदी के तट पर व्याख्यान

ता० १८ जनवरी सन् १८९१ को पं० जी ने बिहार में जाकर लगभग २०० श्रोताओं की उपस्थिति में "आर्यसमाज की आवश्यकता" पर एक व्याख्यान दिया और स्वामी जी की जीवनी के लिये भी सामग्री इकट्ठी करते रहे।

हरिद्वार का कुम्भ और उस पर प्रचार की अभ्यर्थना

ता० ७ मार्च सन् १८९१ ई० को पं० लेखरामजी ने "आर्यावर्त" नामक पत्र में हरिद्वार के कुम्भ पर आर्यसमाज के प्रचार की बड़ी आवश्यक अभ्यर्थना की और ५) का दान अपनी जेब से भेजा साथही यह प्रार्थना की कि इस प्रचार मण्डली को अप्रैल के आरम्भ से ११ अप्रैल तक प्रचार करने के लिये शीघ्रही हरिद्वार को चली जाना चाहिये। यतः लाला मुंशी रामजी (वर्त्तमान महात्मा जी) आरम्भ से ही पूर्ण उत्साह से वैदिक धर्म प्रचार का कार्य कर रहे थे आप भी ता० १ अप्रेलको स्वयं हरिद्वार पहुंच गये और लालाजीको प्रचार में सहायता दी-महात्मा जी से पं० लेखरामजी का यहीं गाढ़ स्नेह होगया था।

कुम्भ प्रचार की समाप्ति पर ता० २० मई सन् १८९१ को पं० लेखरामजी हैदराबाद में गये और वहां जाकर कई व्याख्यान दिये जिससे आर्यसमाज स्थापित होगया। इस स्थान पर मुहम्मदी और ईसाइयों का बड़ा ज़ोर था परन्तु पं० जी के व्याख्यानों के प्रभाव से एक रईस अपने दो बालकों सहित ईसाई होते २ रह गया। सिन्धी रईस जो यवनमत की ओर झुक रहे थे उनमें मुख्य दीवान सूरजमल जी थे। पं० जीका हैदराबाद में आना सुन सूर्य्यमल जी अपने इलाक़े (प्रान्त) की ओर चले गये। परन्तु पं० जी ने निराशा न कर उनके दो पुत्रों कोही जा घेरा बड़े पुत्र का नाम दीवान मेवारामजी था। इन्होंने पं० जी को बहुत टाला परन्तु यह अपने पुरुषार्थ से विमुख न हुये और और बार बार जाने पर उन्होंने यह आग्रह किया आपका जिस मौलवी पर विश्वास हो उससे मेरा शास्त्रार्थ कराकर अपना मन समझौता करलें। पं० जी ने यहां पर शास्त्रार्थ के विज्ञापनों की भरमार करदी। अन्त को सब से पहिले मौ० सय्यद मुहम्मदअली शाह के साथ मुहम्मद साहिब के मोज़िजे (चमत्कारों) पर शास्त्रार्थ हुआ। मौलवी साहिब पं० जी के धाराप्रवाह वक्तृत्वशक्ति के सामने तङ्ग आगये और उत्तर न देसके। इस पर चार मौलवियों अर्थात् मुहम्मद सदीक़ हाजी सय्यद गुलामुहम्मद, मुफ़्ती सय्यद फ़ाजिलशाह और सय्यद हैदरअली शाह ने पं० जी के नाम बड़े लम्बे चौड़े पत्र भेजने आरम्भ किये। पं०जीने भी फ़ारसी का फ़ारसीमें और उर्दू का उर्दू में उत्तर यथा योग्य दिया। इसका यह परिणाम हुआ कि सूर्यमल जी के दोनों पुत्रों को यवन मत से घृणा

हैदराबाद में जाना

होगई। और एकआर्य परिवार वैदिक पथसे च्युत होता २ रह गया। हैदराबाद में ठहर कर एक पुस्तक कि जिसका शीर्षक "क्या आदम और हव्वा हमारे पहिले वालदेन थे" रक्खा। जिसका यह फल हुआ कि ८ वा १० नवयुवक ईसाई होते २ बच गये।

सिन्ध हैदराबाद से लौटकर ता० ८ अगस्त को पं० जी मानूगोमरी आदि आर्यसमाजों में पधारे और अपने मनोहर व्याख्यानों से श्रोताओं को तृप्त किया वहां से लौटकर ता० १० अक्टूबर को लाहौर आर्यसमाज में एक प्रभावशाली व्याख्यान दिया। और ता० १८ अक्टूबर को आर्यसमाज अमृतसर के वार्षिकोत्सव पर प्रचार के लिये गये।

ता० १५ दिसम्बर को पं० जी ने आर्य प्रतिनिधि सभा के मन्त्री द्वारा ज्ञात किया कि कोई केशवानन्द नामक उदासी साधु आर्य धर्म्म के विरुद्ध आन्दोलन कर रहा है अतः आप "नाहन" पधारें। इस समाचार को सुनकर पं० जी नाहन राज्य में गये और साधु केशवानन्द उदासी के साथ महाराज नाहन के सन्मुख बातचीत की। वहां पर इनकी इतनी धाग बैठी कि धर्म्मवीर जी को चार व्याख्यानों के देने का अवसर प्राप्त हुआ जिससे नाहन राज्य में आर्यसमाज स्थापित होगया। इसके अनन्तर वर्ष की समाप्ति पर्यन्त पं० जी पंजाब में ही भ्रमण करते रहे। जिससे सहस्रों मनुष्यों को सत्योपदेश से लाभ प्राप्त हुआ।

नाहन राज्य से लौट कर ता०२१ मार्च सन् १८९२ ई० को पं० लेखराम जी भियानी ज़िला शाहाबाद को गये और वहां प्रचार कर आर्यसमाज स्थापन किया तदनन्तर आप अजमेर

पधारे और बा० राम विलास शारदा से मिले स्वर्ग वासी पं० वज़ीर चन्द्र जीभी उनदिनों वहीं थे अतः पं०जी का राजपूताने से कुछ अधिक स्नेह होगयाथा और इसी कारण जून सन् १८९२ पर्य्यन्त पं० जी स्वामी दयानन्द जी के जीवन वृत्तान्तों को संग्रह करते हुये राजपूताने में ही रहे।

प्रकृति का परिचय

जिन दिनों बून्दी राज में ब्रह्मचारी नित्यानन्द जी तथा स्वा० विश्वेश्वरानन्द जी ने शास्त्रार्थ की धूम मचा दी थी। और जब उसका पता अजमेर आर्य समाज को लगा तो उन्होंने पं० लेखराम जी को सहायतार्थ भेजने का विचार किया। यद्यपि कुछ मनुष्यों ने यह कर भय दिलाया कि वह रियासत का मामला है, कुछ झगड़ा न खड़ा हो जाय और पं० जी को कष्ट पहुंचे। परन्तु धर्मवीर ने एक की न सुनी और सीधे सिंह की न्याई बून्दी की ओर प्रस्थान किया। यतः महाराज साहिब के शास्त्रार्थ से मने करने पर उक्त संन्यासी भी लौट आये थे तो यह सुन कर आप जहाजपुर चले गये और वहां पहुंच कर सांयकाल को ही व्याख्यान दिया पं० जी कुछ दिनों यहां रह कर जुलाई के आरम्भ में फिर पंजाब को चले गये ता० २२ जुलाई सन् १८९२ में "सीवी" (बिलोचिस्तान) को गये वहां स्वा० नि-

मुंशी प्यारे लालजी पेन्शनर पेशकार दफ़्तर पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट बान्दी कुई जो मुं० हीरालाल जी मार मुंशी रज़ीडेन्सी उदय पुर तथा भूत पूर्व प्रधान आर्यसमाज भरतपुर के पिताहैं। लेखराम जी की प्रकृति के विषय में कथन करतेथे कि उन्हें भोजन में उड़द की दाल अत्यन्त प्रिय थी और जिन दिनों वह राजपूताने में जीवन वृतान्त संग्रह कर रहेथे। बहुधा बांदी कुई आया करतेथे तो वही अपना प्रिय भोजन किया करते थे।

त्यानन्द सरस्वती का पौराणिक पं० प्रीतम शर्म्मा से शास्त्रार्थ होनेवाला था। परन्तु प्रीतम शर्म्मा जी ने शास्त्रार्थ से इन्कार किया और कहा कि ता० २४ जुलाई को आपका हमारा शास्त्रार्थ क्वेटे में होगा यह कह कर चलदिया। परन्तु पं० लेखराम जी स्वा० नित्यानन्द जी के पास सीवी ही में एक सप्ताह तक प्रचार करते रहे।

अक्टूबर मास के आरम्भ में पं० जी जालन्धर पहुंचे। उन दिनों छावनी में जाटोंका रिसाला नं० १४ था जिसका अधिक भाग आर्य्यसमाजी था पं० जी का एक व्याख्यान सदर बाज़ार में बड़ा प्रभावशाली हुआ और इसी प्रकार और भी दो व्याख्यान उपरोक्त रिसाले ही में होते रहे। इसके अनन्तर पं० जी ने पुनः राजपूताने की ओर प्रस्थान किया, और स्वामी जी के जीवन वृतान्त की खोज में अजमेर से बीकानेर, अहमदाबाद इत्यादि होते हुये मोरवी पर्यन्त पर्यटन किया। इन स्थानों में जीवन वृतान्त की अधिक सामग्री हाथ लगी। अतः सन् १८९३ के आरम्भ तक पं० जी ने स्वामी जी के जीवन चरित्र को अन्वेषण पूर्वक संग्रह कर उस कार्य को समाप्त कर लिया। और फिर अजमेर लौट आये और यहां अन्तिम व्याख्यान देकर आगरे में पहुंचे वहां २५ फ़रवरी से १ मार्च सन् १८९३ ई० तक स्थानीय आर्यसमाज तथा आर्य मित्र सभा में व्याख्यान देते रहे।

पं० लेखराम जी का बाबा केसरसिंह से वृक्षों में जीव है या नहीं इस विषय पर वार्तालाप हुआ जिसमें पण्डित जी ने साबित कर दिया कि वृक्षों में जीव है परन्तु सुषुप्ति अवस्था में है।

" यदि रामा यदि च रमा यदि तनयो विनयवी गुणोपेतः
तनये तनयोत्पत्तिः सुरवर नगरे किमाधिक्यम् " ।

गृहस्थाश्रम में प्रवेश

ऋषिदयानन्द की आज्ञा का पूर्ण पालन करते हुये जिस समय पं० लेखराम जी ३५ वर्ष के हुये तो ज्येष्ठ सम्वत् १९५७ विक्रमी के आरम्भ में इन्होंने १ मास की छुट्टी ली और अपने निवासस्थान "कुहरा" को गये वहां जाकर अपने विवाह का प्रवन्ध किया। और मरी पर्वतान्तरगत भग्नग्राम निवासी एक कुलीन गृह में वैदिक रीत्यानुसार इनका विवाह संस्कार हुआ। इनकी स्त्री का नाम कुमारी लक्ष्मी देवी था। विवाह के पश्चात् कुछ दिनों अधिक अपने ग्राम में रह कर अपनी पत्नी को धार्म्मिक शिक्षा देने का प्रवन्ध करते रहे परन्तु बहुत से धार्म्मिक प्रचार के कार्यों के उपस्थित रहने से वह अपनी स्त्री की शिक्षा के कामोंको अधिक दिन न कर सके।

" न कृतो प्राणिनां हिंसाः मांस मुत्पद्यते क्वचित् "

जोधपुर में मांस झगड़ा

जोधपुर के महाराज मेजर जनरल सर प्रतापसिंह जी यद्यपि ऋषि दयानन्द तथा वैदिक धर्म्म के दृढ़ भक्त हैं। तथापि उनके चित्त में यह वस गई है कि मांस भक्षण के बिना क्षत्रियों में वीरता स्थिर नहीं रह सकती। उक्त महाराज जोधपुर राज्य के ३ पीढ़ियों से प्रवन्ध कर्ता भी हैं। इधर लाहौर आर्य समाज के भी दो दल उसी मांस प्रचार की व्यवस्था के कारण हो रहे थे। यद्यपि यह सब गन्ध जोधपुर राज्य के ही मांस विषयक व्यवस्था के कारण लाहौर में फैली थी। और इसी कारण स्वा० प्रकाशानन्द जी मांस दलकी ओर से जोधपुर के झगड़े

में पहुंचे भी थे। इनका मुख्य तात्पर्य यह था कि वहां पहुंच कर यह लीला रची जावे कि समाचार पत्रों, सम्पादकों तथा उपदेशकों से पत्रों द्वारा इस बात की व्यवस्था ली जावे कि मांस भक्षण वेद विहित है और व्यवस्थापकों को उचित पारितोषिक भी दिलाया जावे। कतिपय आर्य पुरुषों ने महाराज साहिब की हां में हां मिलाकर इस मांस यज्ञ में आहुतियां डालीं। कुछ उपदेशकों को भी अर्थ प्राप्ति हुई। अब यह विचार हुआ कि यदि पं० भीमसेन जो उन दिनों ऋषि दयानन्द के *निज शिष्य समझे जाते थे और मेरठ के पं० गङ्गा प्रसाद एम. ए. भी स्वर्गवासी पं० गुरुदत्त के पश्चात् उनके सदृश माने जाते थे अतः इनसे भी व्यवस्था ली जावे। इसी कारण इन दोनों महानुभावों को महाराज की ओर से निमन्त्रण भेजा गया।

"अर्थ कामेष्वसक्तानां धर्म ज्ञानं विधीयते"

इधर पं० भीमसेन शर्मा की प्रकृति से आर्य पुरुष पूर्ण परिचित थे अतः उनको ठीक अवस्था में रक्खे जाने के लिये पंजाब प्रतिनिधि की ओर से पं० लेखराम जी को भेजा जाना निश्चित हुआ। महाराजा साहिब के निमन्त्रण को प्राप्त कर पं० भीमसेन और पं० गङ्गाप्रसाद एम. ए. दोनों २ अगस्त सन् १८९३ ई० के प्रातः जोधपुर पहुंचे। जब इस विषय की वार्ता पं० गङ्गाप्रसादजी से आई और इन्हें बहुत प्रकार के

*उन दिनों पं० भीमसेन जी बड़ी प्रतिष्ठा के साथ "आर्य सिद्धान्त" नामक पत्र के टाइटिल पर यह लिखा करते थे :—

(श्रीमतां परम विदुषां श्रीमद्दयानन्द सरस्वती स्वामिना पं० भीमसेन शर्म्मा—सम्पादित, प्रकाशिता नीतञ्च)।

लालच दिये गये तो उन्होंने स्पष्ट कह दिया कि धन तथा प्रतिष्ठा के लिये मिथ्या बोल कर धर्म से गिरना श्रेष्ठ पुरुषों के लिये लज्जाकी बात है अतः यह लालच उन्हें धर्म से च्युत नहीं कर सका। ता० ४ अगस्त को पं० भीमसेन जी से महाराज साहिब की प्रथम भेंट हुई। यद्यपि इस विषय पर विचार करते हुये पं० भीमसेन ने कहा तो सही कि वेदों में मांस भक्षण का प्रत्यक्ष निषेध पाया जाता है तथापि यह मानकर हिंसक पशुओं का वधपाप नहीं क्योंकि वेदों में उनके ने की आज्ञा पाई जाती है अतः दबे दातों ऐसे पशुओं के भक्षण का विधान श्रुति सम्मत होने की व्यवस्था देदी। उधर ५ अगस्त सन् १८९३ ई० को पं० लेखराम जी जोधपुर पहुंचे और इस व्यवस्था का समाचार सुना धर्मवीर पं० लेखराम जी ने पं० भीमसेन की खूब ही ख़बर ली क्योंकि स्वा० प्रकाशानन्द ने सारे नगर में यह समाचार फैला दिये थे कि पं० भीमसेन ने मांस भक्षण वेदानुकूल होने से उसको समर्थन करते हुये व्यवस्था दे दी। पं० लेखराम जी ने पं० भीमसेन से कहा कि आत्मघात करना अच्छा नहीं होता सत्य की सदैव जय होती है अतः यदि आपने महाराज साहिब से स्पष्ट शब्दों में मांस भक्षण का निषेध न किया हो तो यह ज्ञात रहे कि आर्य संस्थाओं में पैर रखने को स्थान न मिलेगा। जब पं० भीमसेन दूसरे दिन महाराज साहिब से बिदा होने के लिये गये तो महाराज साहिब के बिना पूछे ही कहने लगे कि मांस-भक्षण पाप है और वेदों में हानिकारक पशुओं को दण्ड देने तथा अधिक हानि पहुंचाने पर मार डालने की भी आज्ञा है परन्तु उन मरे हुये पशुओं का मांस

अभक्ष्य ही है तथा मैंने यह कहा था कि उनके मांस खाने में दोष नहीं इसका यह आशय नहीं लेना चाहिये कि उनका मांस खाना ही चाहिये और कोई दोष विशेष नहीं है परन्तु मेरे कथन का यह तात्पर्य्य था कि ऐसे पशुओं के मार डालने से संसार की कुछ हानि नहीं है और उपकारी पशुओं के मांस भक्षण की अपेक्षा न्यून दोष है।

इस कथन का महाराज साहिब के चित्त पर कुछ ऐसा प्रभाव हुआ कि जो १०००) रुपये की भेंट पं० भीमसेन जी के लिये दी जानी निश्चित हुई थी वह केवल आधी ही रह गई और इस प्रकार पं० लेखराम जी के पुरुषार्थ से पं० भीमसेन का आत्मघात बच गया।

इन्हीं दिनों अमेरिका के शिकागो नगर की प्रदर्शिनी की धूम भारत वर्ष में हो रही थी। बड़ी २ तय्यारियां की जारही थीं। आर्य समाज की ओर से भी प्रतिनिधि भेजने का विचार हो रहा था। इधर जोधपुर में रावराजा तेजसिंह बहादुर से पं० लेखराम जी को यह पता चला कि भास्करानन्द (जो महाराजा प्रतापसिंह का भेजा हुआ उन दिनों अमेरिका का ही में था) यह चाहता है कि आर्य-समाज उसे अपना प्रतिनिधि चुन ले। परन्तु लेखराम जी उसकी निपट धूर्त्तता से पूर्ण परिचित थे अतएव उन्होंने आर्य जनता को सचेत किया। दूसरी ओर साधु शगुन चन्द (शिवगणाचार्य) भी आशागतों में थे और अपनी वक्तृता की बानगी जनता के सन्मुख दिखाते फिरते थे। अतएव पं० लेखराम जी ने एक अपील तय्यार कर बाबू रामविलास जी को दी और कहा कि इसे आर्य जनता में मुद्रित कर वितीर्ण कर

देना चाहिये। इस अभ्यर्थना (अपील) में २००) रु० तो प्रचार के मार्ग व्यय के लिये और सुयोग्य अंग्रेज़ी भाषा जाननेवाले विद्वान की सेवा मांगी गई थी परन्तु शोक कि उन दिनों अमेरिका जाने के लिये कोई प्रस्तुत न था। जोधपुर से लौटकर पं० लेखरामजी पंजाब गये वहां प्रत्येक स्थानों में मांग पर मांग आने लगी। क्योंकि विरोधियों के आक्रमण निवारण के लिये पंडित जी ढाल का काम देते थे। पंडित जी को विरोधियों के बहुत से पत्रों के उत्तर भी देने पड़ते थे एक पत्र जो उन्होंने *मौलवी अबीदुल्ला के नाम फ़ारसी भाषा में लिखा था उसका अनुवाद पाठकों के चित्त विनोद के लिये लिखा जाता है।

पत्र का अनुवाद

"तहक़ीक पसन्द रास्ते के कारबन्द अनन्तरामअल मशहूर मौलवी अबीदुल्ला! ख़ुदारास्ती की हिदायत देवे। नमस्ते मुझे एक अर्से से ख्याल था कि आपको बज़रिये ख़तो किताबत के आर्यधर्म उसूल से मुत्तले करूं और परमात्मा परब्रह्म की इबादत (उपासना) का तरीक़ा निहायत उम्दा बिला सिफ़ारिश ग़ैर आपको बतलाऊं रब्बुल आलमीन (सृष्टिकर्त्ता परमेश्वर) का हज़ार २ शुक्र (धन्यवाद) है कि आज वह मेरी मुराद पूरी हुई। अब मैं मतलब की ओर रूजू होता हूं अर्थात् आपकी किताब तुहफ़तुल हिन्द (تحفة الهند) अल आख़िर बचश्म ग़ौर देखी। और उसके सब एतराज़ात (आक्षेपों) को इन्साफ़ (न्याय) की तराजू (तुला) में तोला कुल दार-

* यह वही मौलवी साहिब हैं कि जिनका जवाब हुज्जतुल इस्लाम में दिया गया है।

मदार केवल पद्मपुराण भागवत, शिवपुराण व गरुण पुराण तथा मजमुई किस्सेजात् पर पाया गया और साथही मुझे आपकी अक्ल पर अफ़सोस आया कि आपने इन क़िस्सेजात् को तहक़ीक से ढ़ी बनाया तो राजा भोज के समय के पुराण इत्यादि आपने दूरन्देशी से क़ाबिल एतराज़ात मान लिये और इस बे बुनियाद तोहमत (अभियोग) की बदौलत धर्म मुकद्दम व तरीक़ा मुनव्वर से मुतनफ़िफ़र होकर मुसल्मान होगये। बेशक इतना तो मानता हूं कि इन दिनों आफ़ताब (सूर्य) सदाक़त (सच्चाई) अब्र (बादल) जुलमत और जहालत (अन्याय और अविद्या) में डूबा हुआ है चुनांचे आप की तहरीर से जाबजा (यत्रतत्र) ज़ाहिर है। इसके अलावा बुतपरस्ती, मक़ां परस्ती, दरिया परस्ती, और आफ़ताब परस्ती इत्यादि कई अक़साम (भांति) की जहालतों को भी आमदनी की सूरत करलिया है इन्हीं दिनों की कमबख़्ती का बाइस है कि आप जैसे लायक़ और रास्ती के मुतलाशी बुनियाद सदाक़त से फिर कर नये मज़हबों में दाख़िल हुये चले जाते हैं परन्तु परमात्मा को भारतवर्ष की बुरी दशा पर रहम आया और बमूजिब (Law of Nature) सृष्टि क्रम के ज़रूरी था कि कोई फ़ाज़िल होता चुनांचे मुत्तसिफ़ औसाफ़ जनाब स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महराज ने जगत् के उद्धार पर कमर बांधी और जो और लोगों से तमै (लालच) और तलवार से न हो सका वही तहक़ीक़ात (अन्वेषणा) व दलाइल बेनज़ीर से अच्छी प्रकार दिखलाया बाद अपनी ख़िदमत मफ़ज़ा के वह महाराज रिहलत आलिये जाविदानी (परमधाम) होगये। चुनांचे इस वक्त आर्य-

वर्त्त में तीनसौ के क़रीब बल्कि ज़्यादह आर्यसमाजे हैं उन्होंने वेद मुक़द्दस से यह साबित करदिया कि हिन्दू लफ़्ज़ ग़लत है अस्ल नाम आर्य है वेद मुक़द्दस से ज़्यादा तौहीद और वहदानियत और किसी किताब में नहीं है दुनियां की सब किताबों में वेद पुराने हैं। तवारीख़ और तालीम दोनों से यह साबित है कि वेदों में कोई क़िस्सा नहीं है और न किसी इन्सान मुर्दा व ज़िन्दा पर ईमान लाने की ज़रूरत है। तमाम मख़लूक़ात के वास्ते निहायत उम्दा और इन्सानी इर्शाद (आज्ञा) परमात्मा की तरफ़ से मौजूद हैं। पस गुज़ारिश है कि अगर आप दर हक़ीक़त रास्ती व तहक़ीक दर पसन्द हैं तो मुबाहिसा करके तहरीरी व तक़रीरी फ़र्माकर वेद मुक़द्दस आर्यधर्म को क़ुबूल करें। क्योंकि अर्से १३ साल की तहक़ीकात से स्वामी जी ने साबित करदिया है कि वेद मुक़द्दस के सिवाय और कोई किताब इलहामी नहीं है। पस बख़ियाल नेकनीयती के यह न्याज़ नामा इरसाल ख़िदमत हैं।

आपका न्याज़मन्द

लेखराम—

विपदि धैर्यमथाभ्युदयेक्षमा।
सदसि वाक् पटुता युधि विक्रमः॥
यशसि चाभि रुचिर्व्यसनं श्रुतौ।
प्रकृति सिद्ध मिदं हि महात्मनाम्॥

[मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी का विज्ञापन]

" आज की तारीख़ से जो २० फ़र्वरी सन् १८९३ है छः वर्ष के अन्तरगत यह मनुष्य (पं० लेखराम) अपनी बद जबानियों की वजह से जो इसने (रसूल अल्लाह) के हक़ में

की है आज़ाब शदीद में मुब्तला होजावेगा।" इसके अतिरिक्त पं० लेखराम जी के क़त्ल की भविष्य वाणी सच्ची दिखलाने की गरज़ से इसी विज्ञापन में यह भी वर्णन किया कि अब मैं इस पेशीनगोई को प्रगट कर सम्पूर्ण यवनों आर्य्यों, ईसाइयों तथा अन्य पुरुषों पर प्रगट करता हूं कि यदि ६ वर्ष के भीतर कोई आज़ाब लेखराम के ऊपर नाज़िल न हुई तो समझो मैं ख़ुदा की ओर से नहीं। यदि मेरी पेशीन गोई झूंठी निकली तो प्रत्येक दंड के भुगतने के लिये मैं उद्यत हूं कि मेरे गले में रस्सा डालकर मुझे सूली पर चढ़ाया जावे। इस विज्ञापन द्वारा पं० लेखराम जी के क़त्ल के इरादे को मिर्ज़ा जी ने उपरोक्त शब्दों में प्रगट करदिया था और यह शेर विज्ञापन के आरम्भ में लिखा हुआ था।

पेशीनगोईकी आड़में क़त्ल करवादी

"इल्ला ये दुश्मन नादानो बेराह।
तीरज़ तेगे. बुर्राने मुहम्मद"॥

इसके अतिरिक्त मुसलमानों को भड़काते हुये लिखा था कि "कौन मुसलमान है जो इन पुस्तकों को सुने और उसका हृदय खण्ड २ न हो" और यह मेरी पेशीनगोई मुसलमानों के लिये और उनके लिये जो अस्लियत को जानते हैं एक संकेत है।

धर्मवीर पं० लेखराम जी ने इस विज्ञापन को पढ़ा और एक उत्तर दिया जो—बड़े सरल शब्दों में लिखा गया था वर्णन किया जाता है पाठकगण? क्या यह हमारे क़त्ल या विष देने के मंसूबे नहीं हैं। परन्तु मिर्ज़ाजी विश्वास रक्खें कि मैं उनकी इन धमकियों से उनकी ओर रुजू नहीं हो

सकता। हां यदि वह मुसलमान मत की सत्यता सिद्ध करदें और इस लिये कि उन्होंने अपने तईं प्रगट किया है कि खुदा ने उन्हें मसीद मौजूद पैदा किया है तो कुछ चमत्कार दिखलावें और मुझे क़ायल करें। और वह चमत्कार यह होगा कि (१) यदि मिर्ज़ा ज़ी एक मास के भीतर अपने इलहामी खुदा की सहायता से संस्कृत में उपदेश सीखकर आर्यसमाज के दो विद्वान् पं० देवदत्त शास्त्री और पं० श्यामजी कृष्णवर्मा का दम बन्द करदें। तब हम आप के इलहाम के सामने अपने तईं पराजय मान लेंगे। (२) छः शास्त्रों में से ३ शास्त्रों के ऋषिकृत भाष्य नहीं मिलते। यदि वह तीनों भाष्य अपने इलहाम देनेवाले की मार्फ़त (द्वारा) हमको मंगवा दें तो मैं अवश्य आप की सत्यता को मान लूंगा। पं० लेखराम जीने ३ शेर भी लिखे जो पाठकों के मनोरञ्जनार्थ नीचे लिखे जाते हैं—

दरीं रहगर कुशन्दम वर – व- सोज़न्द
न तावम् रुये दीने वेद अक़्दस—
फ़िदा गश्तम ज़ि सरतापा बराहश
नशिरओ पा व्रम परमात्मा वस
नदारम ग़ैर ऊ — परवाय हरगिज़
चि बाकम गर बुवद नाशाद हरकस

प्रिय पाठको! इन शैरों के आशय से पता चलता है कि हमारे चरित्रनायक का सत्य पर कितना विश्वास था। हमारे धर्मवीर को मुहम्मदी तलवार का भय न था। किन्तु सत्य धर्म के त्यागने से आत्मा हिचकती थी।

इन्हीं दिनों अमेरिका के शिकागो नगर की प्रदर्शिनी की

शिकागो की प्रदर्शिनी

धूम सुनने में आई। और इधर आर्यसमाजकी ओर से प्रतिनिधि भेजे जाने के लिये विचार प्रविष्ट था। जब पं० लेखराम जी जोधपुर में ही थे। उन्हीं दिनों राव राजा तेजसिंह द्वारा आपको ज्ञात हुआ कि महाराजा प्रतापसिंह जी के द्वारा भेजे हुये स्वामी भास्करानन्द (जो उन दिनों अमेरिका ही में थे) यह चाहते हैं कि यदि आर्यसमाज उन्हें अपना प्रतिनिधि चुन ले तो अच्छा हो परन्तु लेखराम जी को भली भांति ज्ञात था कि वह एक धूर्त्त मनुष्य है। इसके लिये जनता को परिचित करने के लिये आपने चेतावनी की। दूसरी ओर मुं० शगुनचन्द (स्वर्गवासी शिवगणाचार्य) आशागतों में थे और अपने व्याख्यान के नमूने—आर्यजनता को दिखा रहे थे। परन्तु पं० जी जानते थे कि—इन तिलों में तेल कहां? आर्यसमाज का प्रतिनिधि एक सुयोग्य वक्ता, सिद्धान्तों का ज्ञाता तथा सच्चा हितैषी होना चाहिये। वहां इन बातों में से कोई भी न थी। अन्तको पं० जी ने बा० रामविलास शारदा जी द्वारा एक अपील आर्यजनता की विज्ञप्ति के लिये मुद्रित कराई और एक सुयोग्य अंग्रेजी जाननेवाले के लिये आवश्यकता प्रगट की परंतु शोक कि उन दिनों कोई माई का लाल जाने को उद्यत न हुआ हमारे पं० जी के हृदय पर इसका प्रबन्ध न हो सकने के कारण एक बड़ी चोट सी लगी। परन्तु क्या करें यदि वह अंग्रेज़ी जानते होते तो अवश्य अर्णव पोत (जहाज) में बैठ कर अमेरिका चले जाते।

कार्तिक सम्बत् १९५० में लाला मुंशीराम जी ने अपने

हैदराबाद में धर्म प्रचार

प्रसिद्ध पत्र सद्धर्म प्रचारक में पं० जी के विषय में अपील करते हुये इस प्रकार लिखा कि "कुरानाचार्य पं० लेखराम जी की प्रत्येक स्थानों पर बड़ी आवश्यकता रहती है। दूसरे उनके पास स्वामी जी के जीवन का कार्य बड़ा आवश्यक है। हम स्वामी जी के जीवनचरित्र को रोककर जहां तक हो सकता है केवल समाजों को प्रसन्न करने के लिये पण्डित जी को भेज देते हैं परन्तु "एक लेखराम और सम्पूर्ण समाजोंमें उनकी आवश्यकता" हम इस समय पाठकगणों के सन्मुख हैदराबाद का समाचार इस प्रकार वर्णन करते हैं जो कि हमारे वर्णन की सत्यता को प्रगट करता है कि हैदराबाद में आजकल यवन मत बड़ा जोर पकड़ रहा है। इस समय के आये हुये समाचारों से ज्ञात होता है कि महाराजा कृष्णप्रसाद जी जो पेशावर फ़ौज वज़ीर हैं। यवन मत की ओर झुक रहे हैं और उन का पौराणिक मत पर पूर्ण विश्वास नहीं। इस समय वहां आर्य पथिक को पहुंचने की बड़ी आवश्यकता है और यह भी ध्यान रहे कि इस समय पं० जी के शरीर में कुछ कष्ट भी है। प्रिय पाठको! आपको ज्ञात हुआ हुआ होगा कि हमारे चरित्र नायक का जीवन कितना आवश्यकीय जीवन था। तथापि पं० जी अपने स्वास्थ की ओर धर्म प्रचार के सामने कुछ ध्यान न देते थे। वह उसी रुग्णावस्था में हैदराबाद गये वहां जाकर अपने काम में सफलता प्राप्त की।

लाहोर में इंडियन नेशनल कांग्रेस

इसी वर्ष अर्थात् सम्वत् १८९३ के दिसम्बर मास में लाहौर में कांग्रेस का बड़ा अधिवेशन होने वाला था। और उन दिनों लाहौर भी

नेशनल कांग्रेस का केन्द्र बन रहा था। राजनैतिकों के शिरोमणि स्वनाम धन्य दादा भाई नौरोजी को उक्त कांग्रेस (भारत जातीय महासभा) का प्रधान निर्वाचित किया गया था। दूर २ से बहुत से प्रसिद्ध आर्य भाई भी सम्मिलित हुये थे। इस अवसर पर एक ऐसे योग्य वक्ता की आवश्यकता थी कि जो इस समय को साध ही न सके किन्तु जिसकी बढ़ी चढ़ी वक्तृत्व शक्ति के साथ उसकी आवश्यक बातों में जानकारी भी बढ़ी हुई हो।

अतः इस अवसर पर पं० लेखराम जी को ही बुलाया गया और वहां उनके कई व्याख्यान हुये। जो उन दिनों के समाचार पत्रों में छप चुके हैं।

मनस्वी कार्यार्थी न गणयति दुःखं न च सुखम्

१० जनवरी सन् १८८४ ई० को कांग्रेसकी समाप्ति पर जब पं० जी लाहौर से लौटे तो उन्हें समाचार मिला कि शाहाबाद (ज़िला अम्बाला) से लगभग १० कोस की दूरी पर "मीरान जी का ठगायन वास" नामक नगर में कुछ हिन्दू मुसलमान होने को उद्यत हैं। उन दिनों पं० जी के पैर में एक फोड़ा निकल आया था परन्तु पं० जी अपनी असह्य वेदना की ओर कुछ ध्यान न देते हुये वहां गये और उन्हें व्याख्यानों द्वारा समझा बुझाकर उनको स्वधर्म पर स्थित रक्खा सुना गया है कि इस स्थान पर इन को बड़ी आपत्ति झेलनी पड़ी थी। परन्तु उस समय के समाचारों तथा दर्शकों के कथन से ज्ञात हुआ कि उस आपत्ति को पं० जी ने बड़े साहस तथा धैर्य से सहन करते हुये अपने मनोरथ को सफल किया। उनके व्याख्यानों का यह प्रभाव हुआ कि वहां झट ही आर्य

समाज स्थापित होगया।

शाहाबाद से लौटकर ता० १६ जनवरी १८६४ को पं० जी आर्य समाज में पहुंचे। और वहां आपका एक प्रभावशाली व्याख्यान हुआ। कर्नाल से लौटते हुये ता० २२ जनवरी को जालन्धर आर्य समाज में पहुंचे। वहां से ता० १३ फरवरी को भींग मधियाने में जाकर तीन दिन लगातार व्याख्यान दिये और १३ अप्रैल को कुरुक्षेत्र के मेले पर आकर कई व्याख्यान दिये।

पर्य्यटन

१५ जुलाई को जालंधर में मूर्तिपूजा पर व्याख्यान हुआ और वहां से कवेटा आर्य समाज की ओर प्रस्थान किया वहां पहुंच कर ३ व्याख्यान दिये। १३ अगस्त को वहां से लौटते हुये बिलोचिस्तान, भावल पुर, और मुल्तान की आर्य समाजों में गये-वहां से गोविन्दपुर आर्य समाज के वार्षिकोत्सव में सम्मिलत हुये। वहां से पुनः जालंधर आर्य समाज को पधारे यहां पर एक राधास्वामी के चेले को आर्य बनाया और फिर लाहौर आर्य समाज में डेरा जमाया इस समय पं० जी के साथ आपकी धर्म्म पत्नी जी भी थीं। मार्ग में लौटते समय आप जतगरा में उतरे और वहां एक व्याख्यान दिया और लाला मूसा नामक नगरमें एक पुरुष को यवन मत से हरा कर सन्मार्ग पर लाये। इन्ही दिनों पं० जी ने अनुराग से भरत् के खंडहरों की जाकर देखा। यह वही प्रसिद्ध स्थान कहा जाता है कि जहां महाराज कैकेय की राजधानी थी। और भ्रातृ-भक्ति भाजन भरत जी महाराज की नन्हसाल थी। यहां पर उन्होंने एक प्राचीन काल का सिक्का भी देखा

भरतजी की नन्हसाल

था। इसके अनन्तर ता० १० मार्च सन् १८९५ ई० को स्याल-कोट नगर में पहुंचे वहां रिसाले के सिपाही यवन मत की ओर झुक रहे थे वहां पहुंच कर उनको शंका समाधान की और आर्य धर्म पर आरूढ़ किया। ता० ३१ मार्च को देहली आर्य समाज में जाकर व्याख्यान दिया और यवनोंसे शास्त्रार्थ भी किया था यहां पर मुसलमानों ने चिढ़ कर पं लेखराम जी पर दावा करदिया। प्रकरण वश उस मुकद्दमें की एक संक्षिप्त प्रति दी जाती है—बहुत सम्भव है कि पाठकों का मनोरंजन करें।

(१) मौलवी अब्दुल हक़	दावा बनाम मुल्ज़िमान
(२) हबीब अहमद	(१) पं० लेखराम
(३) मुहम्मद उद्दीन	(२) नरसिंहदास
(४) कमरुद्दीन	
(५) अब्दुल करीम	
देहली निवासी मुस्तग़ीसान	

जुर्म वमूजिब दफ़आत् २९२, २९३, २९८, ५०१, तथा ५०२ ताज़ीरात हिन्द—"हुक्म आख़िरी इस्तग़ासा खर्च"

"यह इस्तग़ासा अब्दुल हक़ की ओर से पं० लेखराम के ऊपर है जो कि अमृतसर का निवासी सुना जाता है। इस्तग़ासा यह है कि पं० लेखराम ने एक पुस्तक बनाई जो कि शामिल मिस्ल है और जिसमें अनुचित वाक्य यवन मत के पैग़म्बरों के लिये इस्तेमाल किये गये हैं जिससे वह मस्तूजिब सज़ा का ठहरता है। मुस्तग़ीसों के यह बयानात हैं कि लगभग ढाई माह व्यतीत हुआ कि एक पुस्तक एक पुरुष ने अब्दुल हक़ को दी और कहा कि यह पुस्तक पं० लेखराम ने

भेजी है जिस आदमी ने यह किताब दी थी वह नामालूम है और अबदुलहक़ एक महजूरी मुन्सिफ़ रियासत हैदराबाद के नौकर हैं इसलिये उसने वह पुस्तक अपने दोस्तों को दिखलाई जिसमें मुहम्मद उद्दीन और कमरुद्दीन भी शामिल थे। हबीबुद्दीन बयान करता है कि मुझको यह किताब एक स्कूल के लड़के से मिली। उसने अब तक उसको नहीं लौटाया। अब्दुल करीम बयान करता है कि ज्योंही मैंने इस किताब का शोर सुना मैंने फ़ौरन बाजार से मंगवाई परन्तु इनमें से किसी बयान से भी कोई जुर्म इन दफ़आत में बरखिलाफ़ लेखराम ज़ाहिर नहीं होता—क्या वह ज़ाहिर करते हैं कि कोई जुर्म जो दफ़ा २९२ सरज़द हुआ-जुर्म जिसका दावा किया जाता है "कि एक ना मालूम आदमी ने यह किताब अब्दुल हक़ को देकर कहा कि यह लेखराम ने भेजी है" और इन किताबों का छपवानेवाला लेखराम ही कहा जाता है-यह किताबें अमृतसर में छपी हैं। मैं नहीं ख़याल करता कि लेखराम की निस्बत ज़िला देहली में कोई जुर्म सरज़िद में करने का सबूत दिया गया है। इसके अलावा मैं ख़याल करता हूं अगर ज़ेर दफ़ा २९२ में कोई जुर्म देखा भी जाता तब भी बाकआत इस मुक़दमे के ऐसे हैं किसी फौज़दारी कारर्वाई की ज़रूरत न मालूम हुई अशाअतकी तारीख़ १८९० ई० है। मुस्तग़ीसान के कब्जे में यह किताब महीनों से है और और जब वह इस्तग़ासा करते हैं कि यह किताब फ़ुहश है। मैं ख़याल करता हूं कि इसमें ज़्यादा कारर्वाई की गुंजाइश नहीं इसलिये ख़ारिज करता हूं*। दः हाकिम

* इस मुक़दमे की अपील देहली और लाहौर चीफ़ कोर्ट में भी की गई परन्तु दोनों स्थानों से ख़ारिज हो गई।

"यस्तर्कणानुसंधत्ते सधर्म्मवेदनेतरः"

ता० १३ अप्रैल के प्रातःकाल पं० जी मालेर कोटला के के उत्सव में सम्मिलित हुये—यह एक मुसलमानी रियासत है। हमारे चरित्र नायक के पहुंचते ही धूम मच गई। शंका समाधान के समय एक मुंशी अब्दुल्लतीफ़ नामी ने पुनर्जन्म विषय में कुछ प्रश्न किये जिनका उत्तर पं० कृपाराम जी (स्वर्गवासी माननीय स्वा० दर्शनानन्दजी महाराज) ने बड़ी योग्यता से दिये—परन्तु मुन्शी जी उत्तर सुनकर कह दिया करते थे कि तबियत को तसकीन नहीं हुई। उस समय महात्मा मुंशीराम जी उस उत्सव का प्रबन्ध कर रहे थे। उन्होंने स्वामी दर्शनानन्द के दिये उत्तरों का भाव समझना चाहा—इस पर मुंशी जी ने घबड़ा कर कहा कि साहिब आप कौन हैं जो भाव समझावेंगे इस पर महात्मा जी ने उत्तर दिया "स्थानिक समाज के प्रधान की आज्ञा से यहां का प्रबन्ध भी कर रहा हूं। इसके अतिरिक्त पञ्जाब प्रतिनिधि का प्रधान भी हूं।" इस पर भी उन्हें विश्वास न आया और बोले कि आपका नाम प्रतिनिधि सम्बन्ध में मैंने कभी नहीं सुना—यहां तक कि सद्धर्मप्रचारक पत्र में भी नहीं पढ़ा—अतः आप प्रतिनिधि के प्रधान नहीं है। इस पर महात्मा जी को सन्देह हुआ और उन्होंने युक्ति से पूछा कि मुंशी जी क्या आप मेरा नाम जानते हैं। मुन्शी साहब ने तुरन्त उत्तर दिया कि जी हां खूब जानता हूं। महात्माजी ने पूछा कि भला बतलाइये तो सही कि क्या नाम है? मुंशी जी कहने लगे आप ही तो पं० लेखराम साहेब हैं। इस पर श्रोतागण खिल खिला कर हंस पड़े किसी कवि ने सत्य कहा है।

"को वीरस्य मनस्विनः स्वविषयः को वा विदेशः स्मृतः"
यं देशं श्रयते तमेव कुरुते बाहु प्रतापार्जितम्"

मालेर कोटले से लौटने के पश्चात् पं० लेखराम जी रोपड़ आर्यसमाज के उत्सव पर पहुंचे और वहां उनके २ व्याख्यान भी हुये इधर बालकराम उदासी साधु भी-प्रीतम देव, केशवानन्दादि की भांति पञ्जाब में भमण कर स्वा० दयानन्द जी तथा आर्य्य समाज को जी खोल कर गालियां प्रदान कर रहे थे। पं० जी ने सुनकर बालकराम जी से शास्त्रार्थ करना चाहा। और "भेरा" आर्य समाज में जा विराजे परन्तु उक्त साधु जो ने शास्त्रार्थ से मनेकर दिया—पं० जो को कई आवश्यक कार्यों के अतिरिक्त लाहौर जाना आवश्यक था क्योंकि पं० लेखराम जी की धर्मपत्नी गर्भवती थीं और कुछ सन्तानो त्पत्ति की आशा थी इसलिये वह ता० १५ मई सन् १८९५ को लाहौर से लेकर कुहटा पहुंचे—वहां ता० १८ मई शनिवार के दिन प्रातः ६॥ बजे पुत्र उत्पन्न हुआ। बच्चे का नाम करण संस्कार वैदिक रीति से करके २२ मई को पुनः यात्रा आरम्भ कर दी—और "भेरा" आर्यसमाज में आ विराजे यहां बालकम साधु को पुनः आमंत्रित किया परन्तु वह न आये और शास्त्रार्थ के नाम से टाटमटोला करते रहे। इन्ही दिनों पं० जी को समाचार मिला कि उनके पिता का देहान्त हो गया अतएव वह छुट्टी लेकर अपने निवास स्थान कुहटा को गये और फिर अपनी धर्म्म-पत्नी और पुत्र "सुखदेव" को लेकर जालन्धर ही आगये।

पुत्रोत्पति का आनन्द

पं० जी के पिता का देहान्त

ता० १६ मई सन् १८८६ को आप रोपड़ आर्य्य-समाज के उत्सव पर पहुंचे-उन दिनों द्वारिकामठ के श्री शंकराचार्य जी का जालन्धर में आगमन सुनाई देता था। अतएव आप जालन्धर पहुंचे। वहां पर बड़े बड़े विद्वानों के व्याख्यान हुये। पं० जी का व्याख्यान भी विशेष हलचल मचाने वाला था—यहां से चल कर कर्त्तारपुर ग्राम (दण्डी विरजानन्द जी के जन्म स्थान) में उपदेश दिया—और आर्य्य-समाज स्थापित की-इन दिनों पं० जी जहां कहीं उत्सवों पर जाया करते थे वहीं उनके साथ उनकी धर्म्मपत्नी तथा प्रिय पुत्र सुखदेव जाया करते थे—इसी के अनुसार एक समय अम्बाला और मथुरा आर्य्यसमाजों के उत्सवों पर गये वहां से उनका पुत्र सुखदेव बीमार होकर लौटा। परन्तु पुत्र को बीमार ही छोड़ कर शिमला आर्य्यसमाज के उत्सव पर पधारे और जब ता० २६ अगस्त सन् १८९६ ई० को लौटे तो पुत्र की बीमारी बढ़ती ही पाई।

यद्यपि चिकित्सा तथा निदान कराने में कुछ कमी नहीं की गई थी परन्तु प्रभु की बड़ी विचित्र लीला है कि हमारे चरित्रनायक का सुपुत्र सुखदेव सबके देखते २ ता० २८ अगस्त सन् १८९६ के दिन लगभग सवावर्ष की आयु में नश्वर भौतिक कलेवर का परित्याग कर * प्रेतभाव को प्राप्त होगया उस समय पं० लेखराम जी के चित्त में किंचित उद्वेग के स्थान में सहनशक्ति का अपूर्व चमत्कार देखा गया। आपने धैर्य्य को धारण करते हुये शोक को पास तक न फटकने दिया सच है:-

* पुनरुत्पत्तिः प्रेत्यभावः (न्यायदर्शने)

प्राप्तव्यमर्थं लभते मनुष्यो देवोऽपि तं लंघयितुं न शक्तः
तस्मान्न शोचामि न विस्मयो मे यदस्मदीये नहि तत्परेषाम् ।

परन्तु मृत बालक की दुखिया माता के कोमल हृदय पर एक भारी बज्रपात हुआ कि जिस जालन्धर की भूमि में उसने पुत्र रत्न प्राप्त किया था उसे उसी जालन्धर की कठिन भूमि में सब के सन्मुख हाथों से खो देना पड़ा हा ! फिर उस भारत महिलाग्रगण्या से यह दुख क्योंकर सहन हो सकता था संसार का विचित्र प्रवाह है किसी महात्मा ने सत्य कहा है—

क्वचिद्विद्वन्गोष्ठी क्वचिदपि सुरामत्त कलहः
क्वचिद्वीणावादः क्वचिदपि च हाहेति रुदितम्
क्वचिरम्या रामा क्वचिदपि जरा जर्जर तनुः
न जाने, संसारः किममृतमयः किं विषमयः ॥

धर्म प्रचार

सितम्बर सन् १८८६ ई० के आरम्भ में पं० लेखराम जी ने पुनः वैदिक धर्म का प्रचार आरम्भ किया और पसरूर में लगभग ८०० श्रोताओं के बीच में वैदिक धर्म की श्रेष्ठता पर एक प्रभावशाली व्याख्यान दिया। यहां पर व्याख्यान की समाप्ति पर शंका समाधान का समय दिया गया जिसमें एक मौलवी महोदय ने कुछ प्रश्न किये थे जिसका उचित उत्तर दिया गया। लाला गणेशदास जी सियालकोटी जी यहां की एक विचित्र घटना की सूचना देते हैं कि जिससे हमारे चरित्र नायक के निर्भीक दृढ़व्रत होने का प्रमाण पाया जाता है। तीसरे दिन जब कि पं० लेखराम जी का व्याख्यान होने ही वाला था कि एक बड़े

प्रसिद्ध म्यूनिस्पल कमिश्नर आप और महाशय मथुरादास जी उपदेशक के समीप बैठ कर कुछ कानाफूसी करने लगे। आर्य पथिक ने कहा कि "घुसपुस कानाफूसी क्यों करते हो, क्या बात है"?

मथुरादास जी ने कहा कि यह महाशय थानेदार जी का सन्देसा लाये हैं कि यदि आपके व्याख्यान देने से यहां बलवा हो जावे तो पुलिस उत्तरदाता न होगी। यह सुनते ही पं० जी के चित्त में क्रोध का आवेश हुआ और कड़क कर बोले कि "क्या हम युद्ध के लिये आये हैं हम तो धर्मोपदेश करने आये हैं जिसका जी चाहे सुने जिसका जी न चाहे न सुने! यदि इसी प्रकार किसी बात की आशंका की जाती है तो हम देखेंगे कि कौन बलवा करता है। हमें अपनी रक्षा के लिये केवल ईश्वर की सहायता ही पर्याप्त है" यहां से चल कर पं० जी वज़ीराबाद के उत्सव में पहुंचे। वहां इनके व्याख्यानों की धूम मचगई सायंकाल के समय महात्मा मुन्शीराम जी का व्याख्यान होनेवाला था इसलिये उस समय क़ादियानी मिर्ज़ा गुलाम अहमद के चेले हकीम नूरूद्दीन भी आये। मुसलमान श्रोताओं की कमी न थी इस समय यवन श्रोताओं की उपस्थिति में पं० लेखराम जी व्याख्यान के लिये खड़े किये गये। इस व्याख्यान में हमारे चरित्र नायक ने ईश्वर का स्वरूप ऐसा खींचा कि मुसलमानों के सिर हिलने लगे। जब मिथ्या पैग़म्बरों का परिचय (दिग्दर्शन) कराया गया तो कर्त्तलध्वनिसे सभामण्डप गूंजता था और हकीम नूरूद्दीन मनही मन खिजते थे। व्याख्यान समाप्त होने के पश्चात् पं० जी कतिपय आर्यभद्र पुरुषों के साथ वायु सेवन के लिये पलकू

के तट पर गये वहां से लौटते हुये संध्या के समय नगर के बाहर एक मस्जिद में देखा तो मौलवी नूरुद्दीन साहब का व्याख्यान हो रहा है। रात अंधेरी थी सब सुनने को खड़े हो गये—मौलवी साहिब कह रहे थे कि "ओ बेवकूफो! तुम सब बकरों की भांति डाढ़ी हिला रहे थे और यह न समझे कि तुम्हारे ईमान पर कुल्हाड़ा चलाया जारहा था" यह सुनकर रात अधिक हो जाने से घर की ओर लौट आये। यहां से चलकर हमारे व्याख्यान केशरी पं० लेखराम जी-जगरांव, झङ्गस्याल तथा लुधियाने आर्यसमाजों के उत्सवों में सम्मिलित होते हुये—भागोवाला (ज़िला गुरुदास पुर) की आर्यसमाज के उत्सव में पधारे—यहां पर सायङ्काल के समय एक मुसलमान ग्रेजुएट से शास्त्रार्थ हुआ—उस समय २००० से कम उपस्थिति न थी शास्त्रार्थ बड़ा रोचक था पाठकों के चित्त विनोद के लिये उल्लेख किया जाता है। एक ओर प्रश्नकर्त्ता तुर्की टोपीवाले ग्रेजुएट महोदय दूसरी ओर उत्तर-दाता पं० लेखरामजी थे-पं० जीने यह प्रतिज्ञा की हुई थी कि "दुर्जन तोषन्याय के अनुसार जो कुछ उत्तर में कहा जावेगा उसके लिये कुरान व हदीस मूलका प्रमाण देंगे।" और पूछा प्रश्नकर्ता महाशय भी क्या ऐसा करने को उद्यत हैं? क्योंकि प्रश्नकर्त्ता महोदय भी कह चुके थे कि वह मूल वेदों का ही प्रमाण देंगे। यह शास्त्रार्थ "नियोग" विषय पर था—प्रश्न कर्त्ता महोदय को एक स्थान पर प्रमाण देने की आवश्यकता हुई तो लगे पुस्तक पढ़ने और बोलने।

मुहम्मदी—देखिये हवाला रगवेद, मन्दिल..... सोकत.....

आर्यपथिक—महाशय जी शुद्ध उच्चारण तक न कर सकना और वेद दानी का दावा। बस आप निग्रह स्थान में आगये अतः या तो हार मानो या दावा छोड़ो ?

मुहम्मदी—अजी पं० साहिब! चाहे हम वेद जाने या न जाने एतराज़ तो ठीक है।

आर्य पथिक—पहिले कहिये, "मैंने झूठ बोला कि मैं मूल वेद जानता हूं और झखमारी", यह कहो तब मुबाहिसा आगे चलेगा।

मुहम्मदी—बहुत हेर फेर के पश्चात् अच्छा मैंने ग़लत कहा था कि मैं मूलवेदों में से हवाला दूंगा। अब मेरे सवाल का जवाब दीजिये।

आर्य पथिक—आये अब राह-ए-रास्त पर हां अब जवाब देता हूं।

वहां पर दश बीस लिखे पढ़े मुसलमान भी खड़े थे सब बोल उठे-सुबहानल्ला! क्या ताक़त मुनाज़िरा (वादशक्ति) है

आर्यपथिक ने अपने उत्तर में नियोग का ही भलीभांति मण्डन नहीं किया किन्तु मुता के मसअले को भी पेश किया ?

मुहम्मदी—रोक कर कहने लगे कि सिर्फ़ कुरान की आयत पढ़ने से काम न चलेगा किसी मुस्तनिद (प्रामाणिक) तफ़सीर (भाष्य) का हवाला भी देना चाहिये।

आर्यपथिक—अच्छा बतलाओ तुम किस तफ़सीर को मुस्तनिद मानते हो ?

मुहम्मदी महाशय ने जिस तफ़सीर का नाम लिया वही पं० लेखराम के हाथ में थी। उन्होंने उसमें से पढ़कर सुनाया ज्ञात होता था कि उस तफ़सीर को मुहम्मदी महाशय ने

कभी पढ़ने का सौभाग्य भी प्राप्त न किया था। पं० जी से पढ़ने के लिये स्वयं पुस्तक मांगी। यहां पण्डित जी की आशु-स्फूर्ति (हाजिर जवाबी) काम आई क्योंकि इसी शास्त्रार्थ में एक स्थान में इन्ही प्रश्नकर्त्ता महोदय ने यह कहा था कि "खुदा को बीच में क्यों घसीटते हो क्या लाज़िमी है कि खुदा को मानकर ही मुबाहिसा चले ?" इसी के आधार पर एक सन्मुख खड़े हुये मौलवी को सम्बोधन कर पं० जी ने कहा मौलवी साहिब, आप तशरीफ़ लाकर हाज़रीन को पढ़कर सुनादें और देखिये कुरान शरीफ़ की तफ़सीर में क्या लिखा हुआ है। मैं इस दहरिये (नास्तिक) के हाथ में कुरान शरीफ़ न दूंगा।

मौलवी साहिब को कोई आकर्षण शक्ति वेदी तक खींच लेगई और उन्होंने तफ़सीर ज्यों की त्यों पढ़दी और अपनी ओर से यह भी कह दिया :—

"कौन कहता है कि कलाम मजीद में मुताका हुक्म नहीं है। इस पर सभा मण्डप में चारों ओर से करतलध्वनि होने लगी और शास्त्रार्थ सानन्द समाप्त हो गया। इसके पश्चात् पं० जीने श्री परमपदारूढ़ ऋषिवर दयानन्द की जीवनी को पूरा करनेके लिये उनके जीवन की अनेक घटनाओं का संग्रह करते हुये भिन्न २ स्थानों में जाके प्रभावशाली व्याख्यान दिये। पं० जी बड़े हाज़िर जवाब थे एक दिन व्याख्यान देने के पश्चात् लाला चेतनानन्द जी के मुंशी ने विघ्नडालने की इच्छा से कहा कि "पडित जी ने गुरुनानक को हिन्दू तो कहीं नहीं कहा"—इस कुटिलनीति को पं० जी तुरन्त समझ गये और बोले कि देखो बाबा नानकदेव स्वयं क्या कहते हैं। "हिन्दू अन्हा (अन्धा) तुर्कोकाणा। दोहां विच्चो ज्ञानीस्याणां। बाबानानक जी ज्ञानी अर्थात् आर्य थे गुलाम हिन्दू न थे।

जीवन की अन्तिम जवनिका

"मांस मूत्र पुरीषास्थि निर्मिते च कलेवरे
विनश्वरे विहायास्थां यश. पालय मित्रमे"

ता० १५ फ़र्वरी सन् १८९७ ई० के दिन एक मनुष्य आदर्श-त्यागी लाला हंसराज प्रिन्सपल दयानन्द एङ्गलो वैदिक कालिज के पास आया-और फिर वही पुरुष दूसरे दिन कालेज के "हाल" में घूमता हुआ दिखाई दिया। वहां वह पं० लेखराम जी की खोज करता हुआ पता पूछता फिरता था। अन्त को पता पूछते २ वह हमारे चरित्रनायक से आमिला और प्रकट किया कि पहिले मैं हिन्दू था और अब दो वर्ष से मुसलमान हो गया हूं परन्तु अब फिर अपने सत्य मत पर आना चाहता हूं। आप कृपा करके मुझे शुद्ध कर लीजिये सदय हृदय पं० लेखराम जी ने उत्तर दिया कि मैं तुम्हें अवश्य शुद्ध करलूंगा। इस मनुष्य का डीलडौल छोटा जो लग भग ४ या ५ फ़ीट का होगा-काला रंग चेहरे पर दाग़ और नासिका बैठी हुई थी। बोलते समय दो दान्त बाहर निकलते हुये दिखाई पड़ते थे। आंखें छोटी २ और चेहरा गोल परन्तु गाल भीतर की ओर घुसे हुये थे। यह शरीर का हाल था, सिर के बाल छोटे २ और बीच में मुड़ेहुये। डाढ़ी मूंछ छोटी २ जिसमें डाढ़ी अभी भली प्रकार नहीं आई थी और अवस्था लगभग २५ वर्ष के थी।

अपरिचित पुरुष की भीमाकृति

यह मनुष्य हिन्दी बहुत कम बोल सकता था। उसका चेहरा बड़ा भयानक था। पं० जी के पीछे जब पं० जी के मित्र

उससे उसकी जाति और ग्राम का पता पूंछते थे तो वह किसी को स्पष्ट उत्तर न देता और अपने आपको बङ्गाली प्रगट करता था परन्तु परीक्षा से विदित होता था कि वह पटना का रहनेवाला होगा। उसके चेहरे को देखकर मनुष्य बिना रोके टोके कह सकते थे कि वह जाति से बूचड़ होगा। परन्तु सरल हृदय आर्य पथिक का यही कहना था कि नहीं भाई? यह धर्म्म का खोजी है शुद्ध होकर सत्य धर्म्म को ग्रहण करना चाहता है।

'अज्ञात कुल शीलस्य वासो देयो न कस्यचित्"

इस पुरुष ने धीरे २ पं० जी पर ऐसा विश्वास जमालिया कि तीन चार वार इनके गृह में भोजन करता हुआ देखा गया। इससे बढ़कर हृदय की और क्या स्वच्छता होगी कि हमारे चरित्र नायक ने अन्य पुरुषों के अविश्वास के बदले में यह भी जांच न की कि यह पुरुष रात्रि के समय कहां रहता है और १५ या १६ दिन तक पंडित जी के साथ रहता रहा इस समय में न मालूम कितनी वार क़ातिल ने अपनी छुरी को तौला होगा और न मालूम क्या २ विचार इसके मस्तिष्क में घूम रहे होंगे। ता० १ मार्च सन् १८९७ के अनन्तर पं० जी को मुल्तान आर्यसमाज के उत्सव पर व्याख्यान देने को जाना पड़ा। परन्तु ता० ५ मार्च को आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब का का पत्र मिला कि वह सीधे सक्खर आर्यसमाज के उत्सव पर चले जावें परन्तु हा हन्त? मृत्यु सिर पर खड़ी हंसरही थी। तार पहुंचने से पूर्वही पं० जी लाहौर लौट आये। ता० ५ मार्च और ईद का दिन था। हत्यारे ने उस दिन पं० जी के घर और आर्यप्रतिनिधि सभा के दफ़्तर तथा स्टेशन

पर लगभग २० चक्कर लगाये। ता० ६ मार्च सन् १८९७ ई० की प्रातः काल को फिर पं० जी के घर पर आया परन्तु पं० जी अब तक लाहौर न पहुंचे थे। वहां से निराश होकर फिर आर्य प्रतिनिधि सभा के कार्यालय में गया और पं० जी के पास पहुंचा और बाहर की खिड़की में बाहर की ओर मुंह करके जा बैठा। इस समय पंडित जी आगये इस दिन यह अधिक चौकन्ना था और ठहर २ कर चौंकता तथा बैठे २ थूकता रहा मानो उसको जी मिचलाता था। यह देखकर ला० देवीदास जी ने कहा यह मनुष्य स्थान बिगाड़ता है अतः यहां बैठा है? भोले आर्य्यधर्म्म जीने दिया कि भाई बैठे रहने दो तुम्हारा क्या लेता है यह उस दिन नित्य से विरुद्ध कम्बल वह ओढ़े हुये था जिससे अङ्ग का कोई भाग स्पष्ट दिखलाई न देता था।

सभा के कार्यालय से चलते हुये यह किसी भांति काँपा। पं० जी ने कहा कहो भाई तुम्हारी क्या दशा है? कम्बल इस प्रकार क्यों लपेट लिया है? क्या ज्वर तो नहीं है। उसने कहा कि हां साहिब कुछ पीड़ा है। पं० जी मार्ग में किशनचन्द्र कम्पनी में बातें करते रहे और वह पुरुष बाहर ही खड़ा रहा। इसके अनन्तर पं० जी उसको डाक्टर विष्णुदत्त के के पास ले गये और कहा कि यह शुद्ध होना चाहता है और धर्म्मात्मा भी है इसका निदान कीजिये। डाक्टर जी ने नाड़ी देखकर कहा कि ज्वर तो नहीं है परन्तु इसका रुधिर अवश्य चक्कर खा रहा है। यदि पीड़ा है तो पलस्तर लेप लगा दूं। हत्यारे ने उत्तर दिया कि कि औषधि लगाने के स्थान में पीने की दे दीजिये। डाक्टर जीने कहा कि कोई

शर्बत पी लेना। परन्तु पं० जीने कहा कि अच्छा डाक्टर जी पीने की ही दवा दे दीजिये! मानो धर्मवीर अपने हाथों ही अपने प्राण देने का प्रबन्ध कर रहे थे। यदि उस समय प्रलेप लगाने के लिये उसका शरीर नङ्गा किया जाता तो अवश्यही उसकी छुरी का पता लगजाता और वह पकड़ा भी जाता। परन्तु वहां तो कुछ और ही होना था मार्ग में जाते हुये पं० जी ने उसे शर्बत भी पिलवाया जिसके बदले कुछ ही देर में रुधिर की नदी में नहानेवाले थे। लगभग चार बजे के हमारे चरित्र नायक उसको साथ लेकर एक बजाज़ की दूकान पर गये। और उसके हाथों एक थान अपनी माता के पास दिखलाने को भेजा। उसके चले जाने पर बजाज ने पं० जी से कहा आप भी क्याही भयानक पुरुष अपने साथ लिये फिरते हैं। कहीं मेरा थान लेकर न चलता हो। निश्छल हृदय पं० जी फिर उत्तर देते हैं कि नहीं भाई? यह धर्मात्मा है और शुद्ध होना चाहता है, ऐसा मत कहिये।

यस्माच्च येन च यथा च यदा च यच्च,
यावच्च यत्र च शुभा शुभ मात्म कर्म।
तस्माच्च तेन च तथा च तदा च तच्च,
तावच्च तत्र च विधातृवशादुपैति॥

पं० जी बजाज़ की दूकान पर से उठकर घर पहुंचे परन्तु काल का साया साथ था। घर में ऊपर की छत पर सीढ़ी के के साथ लगा हुआ एक बरामदा था। इसी में बहुधा पं० जी बैठकर काम किया करते थे। दोनों ओर भीतें और एक ओर भीतरी कमरे का द्वार था। इस कमरे में इनकी धर्म्मपत्नी बैठी हुई थीं और किवाड़ बन्द थे। चारपाई (खाट) पर

जाकर पं० जी बैठ गये। चारों ओर महर्षि दयानन्द जी के जीवन चरित्र सम्बन्धी पत्र पड़े थे और बीच में खुले द्वार की ओर मुंह किये खाट पर धर्म्मवीर-आर्य पथिक विराजमान हो कर जीवन चरित्र का कार्य करने लगे। बाईं ओर हत्यारा भी कम्बल लपेटे कुर्सी पर जा बैठा। दाईं ओर दो कुर्सियां और पड़ी थीं। लगभग छः बजे सायंकाल के लाला केदारनाथ मन्त्री लाहौर आर्यसमाज और लाला देवीदास जी एकाउन्टेन्ट क्लर्क आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब पं० जी के पास गये और पं० जी से एक व्याख्यान रविवार के दिन देने के लिये प्रार्थना की। इनके जाने के अनन्तर सिवाय पं० जी की धर्म्मपत्नी और माता जी के कोई न रहा। ला० जीवनदास जी भी बाहर सैर करने को गये हुये थे। माता एक ओर पाकशाला में थीं। पं० जी ने हत्यारे से कहा कि "भाई तुम भी जाओ और आराम करो"? यह बात उनकी धर्म्मपत्नी ने सुन ली। परन्तु हत्यारा चुपचाप सुनता रहा और कुछ भी उत्तर नहीं दिया। कुछ काल के अनन्तर माता जी ने कहा कि "पुत्र लेखराम तेल अभी नहीं आया" सुनकर पं० जी जीवनचरित्र को जिसे लिख रहे थे रखदिया और जिस ओर वह हत्यारा बैठाथा उधर को मुंह करके शय्या से उतर खड़े हुये। प्यारे पाठकगण? आप में से कुछ महाशय पं० जी के समीप रहे होंगे तो अवश्य परीक्षा की होगी। आप जान गये होंगे कि उसके अनन्तर पं० जी ने क्या किया होगा! हत्यारा भी जानता था कि अब क्या होनेवाला है! कदाचित वह अपनी छुरी को भीतर से दृढ़ता पूर्वक पकड़ रहा था! पं० जी शय्या से उठे और अङ्गड़ाई लेते हुये कहा कि "ओह! भूल गया" हाय! अब क्या था

मानो कालचक्र ने निज आज्ञा से उन्हें उठाकर कहा कि उद्यत हो जाओ तुम्हारा समय आगया !! देर मत करो !!! बस अपने काल के गाल में जाने ही को थे कि कलेजे को पं० जी ने उत्साह पूर्वक उभार कर हत्यारे के सन्मुख कर दिया और खड़े होगये। मानो उससे निज हाथों से ही कलेजे को उभार कर कहा कि भाई मैं उद्यत हूं शीघ्र काम करो।

"सारा शरीर अपना लोहू में डूबो दिया
पर बुज़दिली के दाग़ से माथा बचा लिया"

परन्तु हाय ? इस समय पत्थर का भी हृदय मोम का हो जाता—लोहा भी पिघल जाता। यदि मनुष्यत्व के भाव का लेश मात्र भी पत्थरवत् हृदयवाले क़ातिल के भीतर होता तो छूरी वहीं की वहीं रह जाती। परन्तु वह दुष्ट तो बहुत दिनों से इसी समय के लिये मनुष्यत्व को हृदय से दूर कर चुका था। इस से बढ़ कर और कौन सा समय उसके लिये हो सकता था। उसने एक साथ ही छुरी पं० जी के पेट के भीतर घुसेड़ दी और ऐसी शीघ्रता से फेरा कि आठ दश घाव भीतर हो गये और अंतड़ियां भी बाहर निकल आईं। प्रियपाठको! आप कलेजे को थामे होंगे और इस आशा में होंगे कि आपके सन्मुख इस भयानक दृश्य तथा घज़ और पत्थरवत् हृदय को भी खंड २ करनेवाली चिल्लाहट तथा आह का चित्र खींचू जोकि धर्म्मवीर के मुख सेनिकली। परन्तु घबड़ाइये न, कोई शोक का शब्द न था और न कोई पीड़ायुक्त चिल्लाहट की ध्वनि थी केवल एक साधारण क्रोध का शब्द उनकी माता तथा पत्नी ने सुना। हा धर्म्म वीर! यदि तुम कुछ रोते और चिल्लाते मनुष्य शीघ्र ही उस दुष्ट हत्यारेको पकड़ लेते। परन्तु तुम्हारे

हृदय में पतित पर दया और क्षमता की इयत्ता समाप्त होती थी ! हा शोक ! तुम्हारी शूर वीरता ने उस दुष्ट पापी को बाल २ बचा दिया और आप की आत्मा ने शीघ्र ही श्रद्धा युक्त चित्त से कहा कि "मेरी पतित भ्राताओं में ज्यों को त्यों श्रद्धा है" अन्तड़ियों का बाहर निकलना ही था कि एक हाथ द्वारा आंतों को सम्हाल दूसरा हाथ क़ातिल के ऊपर फेंका साधारण मनुष्य तो लाहू के दर्शन से शीघ्र ही बे सुध होजाता परन्तु साहसी लखराम जी ने फिर सिंह के समान प्रत्याक्रमण किया—सिंह के शरीर से चाहे रुधिर की नदियां क्यों न बह जावें फिर भी हृदय में कम्पायमान नहीं होता छुरी छीनते समय भी शोक का एक शब्द मुख से न निकला-इसी झपट के साथ दोनों सीढ़ी तक जा पहुंचे और झट छुरी छीन ली। क़ातिल के दोनों हाथ और धर्म्मवीर जी का केवल एक हाथ इस पर भी रुधिर के परनाले चल रहे थे। सम्भव था कि वह छुरी धर्म वीर के हाथ से छीन लेता इतने में धर्मवीर की जननी ने किनारे से जा एक हाथ मारा और छुरी उसे न लेने दी और पं० जी की धर्म्मपत्नी ने इस भय से कि हत्यारा पुनः वार न करे उन्हें रसोई को ओर खींच लिया परन्तु न मालूम कि क़ातिल को क्या सूझी कि अरुण नेत्रों से डराता हुआ फिर पीछे की ओर लौटने लगा इतने में धर्मवीर जी की माता ने दोनों हाथों से उसे पकड़ लिया। उस समय वह हांफ रहा था। उसने माता जी के एक बेलन जो वहां पड़ा था दो तीन मारे जिससे वह अचेत होकर पृथिवी पर गिर पड़ीं और न जाने वह किस मार्ग से भाग कर एक गलीमें आंख ओझल होगया। ६॥ बजे का समय था-

माता और पत्नी का कोलाहल सुनने पर भी कोई पड़ोसी सहायता के लिये न आया-कुछ देर के पश्चात् ला० जीवन दास जी लौटे तो देखा कि शय्या पर धर्मवीर सीधे लेटे हुये हैं और एक हाथ से अपनी आन्तों को दबाये हुये हैं। रुधिर की धारा बह रही है। यह देख कर उक्त लाला जी शोक सागर में डूब गये इतने में डाक्टर सङ्कतराम जी और कतिपय पुरुष भी जा पहुंचे। वहां जाकर देखा कि पं० लेखराम के मुख पर शोक का कोई चिन्ह नहीं है पूछने पर बड़ी दृढ़ता से बोले कि "वही जो शुद्ध होने आया था कमबख़्त मार गया" इसके अनन्तर कहा कि डाक्टर को बुलाओ शीघ्र बुलाओ। ला० जीवन दास ने यत्र तत्र दौड़ कर चारों ओर इस दुख जनक सम्बाद से दिशाओं को पूरित कर दिया-इस समाचार को सुनकर महाशय डा० जयसिंह जी तथा डा० हीरालाल जी तथा बहुत से मेडीकल कालेज के विद्यार्थी आन पहुंचे। यह कार्य करते कराते लगभग १ घंटा व्यतीत होगया परन्तु धर्म्मवीर के मुखावलोकन तथा उनके हरीवत् नाद से यह विदित न होता था कि यह हमें शीघ्र ही छोड़ जावेंगे। शय्या पर लिटा कर जब वैदिक धर्म के सच्चे धर्म वीर का शरीर अस्पताल की ओर ले चले तो पुलिस का १ सार्जेन्ट भी आन पहुंचा—अभी धर्मवीर जी अस्पताल पहुंच न पाये थे कि भाग्यवश महात्मा मुंशीराम जी भी चारबजे की गाड़ी से लाहौर पहुंच गये और इस हृदय विदारक समाचार को सुनकर उनके मकान की ओर बढ़े और मार्ग में आर्य पथिक की सवारी को आता हुआ देख कर हृदय थाम कर साथ होलिये-धर्मवीर जी को अस्पताल में लाया जाकर एक मेज पर लिटा दिया गया।

धर्म्मवीर के अन्तिम वाक्य

ला० मुंशीराम जी ने आगे बढ़ कर देखा कि आर्य पथिक के दोनों हाथ मस्तक पर रक्खे हुये थे क्योंकि उस समय अन्तड़ियां सिविल सर्जन के हाथ में थीं। लालाजी को देखते ही दोनों हाथ उठालिये और बड़ी दृढ़ता के साथ आर्य-पथिक ने कहा कि "नमस्ते लालाजी आप भी आगये" लाला जी के नेत्रों से अश्रुपात होने लगा-दिल दहल गया और लाला जी को ऐसा ज्ञात हुआ मानो शिमले के वार्षिकोत्सव से लौटते हुये मुझे पं० जी नमस्ते कर रहे हैं फिर कहा लाला जी "बेअदबियां माफ़ करना" लाला जी भी गद २ वाणी से अपने आसुओं को रोकते हुये बोले कि पं० जी आपतो ईश्वर पर दृढ़ विश्वास रखनेवाले हैं। प्रत्येक संकट में उसी का सहारा ढूंढा करते थे उसी का ध्यान कीजिये—यह सुनकर बोले कि "अच्छा, तो शायद ही बचूंगा लाला जी मेरे अपराध क्षमा करना" फिर एक वेद मन्त्र का उच्चारण करने लगे।

ओ३म् विश्वानिदेव सवितर्दुरितानि परासुव, यद्भद्रं तन्न आसुव।

अन्त समय पर्य्यन्त इस मंत्र और गायत्री मंत्र का पाठ करते रहे और बीच २ में कहते थे कि "परमेश्वर तुम महान हो परम पिता हो"—

डाक्टर पीरी साहिब ने उन्हें "क्लोलो फ़ार्म" (सम्मोहन घ्राण) सुंघाया और लगभग दो घंटे तक घावों को सीते रहे एक स्थान से आन्त कटकर दो खण्डों में होगई थी आठ बड़े घावों के अतिरिक्त और भी कई छोटे २ घाव थे। डाक्टर साहिब का भी कथन था कि जिस पुरुष के २ घंटे से रुधिर प्रवाह हो रहा हो वह कैसे जीवित रह सकता है और कहा

कि साधारण दशा में तो कोई ऐसे घावों से बच नहीं सकता कदाचित् यह बचजावे यदि यह पुरुष बच गया तो कौतुक ही मानना चाहिये। १॥ बजे के समय तक धर्म्मवीर जी बराबर संकेत करते रहे और हे ईश्वर तू सर्वशक्तिमान् है यही पाठ करते रहे। न घर का ध्यान न हत्यारे पर क्रोध न मृत्यु पर शोक केवल चित्त में एक उलझन थी वह यह कि "आर्य-समाज कि जिसे ऋषि स्थापन कर गया है उसका काम बन्द न होना चाहिये"। धर्म्मवीर ने न तो माता और पत्नी का शोच किया क्योंकि वह जानते थे कि ईश्वर उनका भी सहायक है और न हत्यारे की खोज की प्रार्थना, क्योंकि उनका विचार था कि वैदिक धर्म्म में बदला लेने को शिक्षा नहीं दी गई है किन्तु केवल यही ध्यान था कि आर्य-समाज से तहरीरी (लिखने) काम बन्द न हो जावे धर्म्मवीर जी ने लाला मुंशीराम जी से कहा कि "लाला जी! देखिये आर्य समाज में काम नहीं हो रहा है!" लाला जी बोले "पं० जी आप के पुरुषार्थ के जैसे अभी मनुष्य बहुत कम हैं" परन्तु कुछ न कुछ होही रहेगा"-पं० जी ने शीघ्रही उत्तर दिया कि साहब क्या खाक काम हो रहा है मतवादियों की ओर से शंकायें पर शंकाये चली आरही हैं पुस्तकों पर पुस्तकें छप रही हैं इनमें से प्रत्येक का उत्तर दिया जाना चाहिये। लाला जी बोले कि पं० जी घवड़ाइये नहीं आर्य-समाज पर और कामों का भी बोझ आन पड़ा है।

अब प्रत्येक का उत्तर दिया जावेगा। फिर साधु स्वभाव निडर वीर ने कहा "लाला जी आप गज़ब करते हैं—क्या उत्तर उस समय दिया जावेगा जब कि विष अच्छे प्रकार

शरीर में घुल जावे, इसी प्रकार आर्यसमाज की हितवार्ता लगभग आधघंटे तक करते रहे। २ बजे के समीप धर्मवीर के कलेवर का दृश्य बदलता दिखलाई दिया। दो वार वेग के साथ हाथ हिलाये और लगभग ५ मिनट में हाथ सीधे करके परमात्मा को अपने तईं अर्पण कर सदा की नींद में सो गये। पीली फटने के साथ २ ही धर्म्मवीर की मृत्यु का समाचार विद्युतवत सारे लाहौर में फैल गया—क्या हिन्दू, क्या जैनी क्या ब्राह्मो, क्या सिक्ख, सब के चित्त पर इनकी मृत्यु का प्रभाव तथा अपने प्यारे बच्चे की मृत्यु से जो दुख आर्य जनता को होगा वह दुःख लेखराम वध को सुनकर हुआ। अन्त को सिविल सर्जन ने बड़ी सहानुभूति की दृष्टि से किसी यवन को मृतक शरीर के पास फटकने न दिया और शव को आर्य पुरुषों के हवाले करने की आज्ञा प्रदान की। अन्दर जाकर देखा गया तो आर्य-पथिक को सदेव का यात्री पाया।

* आखें मुंदी हुई परन्तु चेहरे में किसी प्रकार परिवर्त्तन नहीं वही हृष्ट पुष्ट शरीर, वही विशाल छाती कुछ भी भेद न था। अश्रुधारा बहाते हुये सब आर्य भाइयों ने शोक पूर्वक

* प्रिय पाठको ? आज त्रयोदशी का दिन है लगभग ८॥ बज चुके हैं। इस समय मुझे धर्म्मवीर जी के इस अन्तिम समय की हृदय विदारक कथा लिखने का कुछ ऐसी प्राकृतिक घटनावश अवसर मिला है कि ठीक इसी दिन और ठीक इसी समय मेरी धर्म्मपत्नी भगवती देवी का भी स्वर्गवास हुआ था अतः वह और यह दोनों दृश्य मिलकर मेरे धैर्य को मुझ से दूर करते हैं अतः इस करुणाक्रन्दन को अधिक रोचक बनाने की आवश्यकता नहीं केवल परमेश्वर की अपार माया और अटल नियम की ओर ध्यान देना चाहिये। "गतानुगतकोलोकः" की कहावत सत्य है॥

वस्त्र पहनाये । अर्थी को बाहर लाया गया सारे शरीर को श्वेत पुष्पों से ढांप दिया गया और एक केमरा (चित्र पट) जो उस समय विद्यमान था धर्म्मवीर का मुंह खोलकर उनका चित्र लिया गया। अर्थी उठाई और सच्चे शहीद की सवारी सीधी अनारकली में पहुंची। अर्थी के साथ भी २० सहस्र से न्यून पुरुष न था। यहां इनके पुत्र और शोकातुर माता आन पहुंची जिसका विलाप सुनकर २० सहस्र मनुष्यों के नेत्रों से अश्रुनद प्रवाहित होने लगा। एक युवक अचेत हो कर गिर पड़ा ।

अर्थी ने नगर में प्रवेश किया। प्रत्येक स्थान में आर्य जाति की देवियों के नीचे छत फटी पड़ती थी। प्रत्येक देवी को इतना कष्ट था मानों उनका प्यारा आत्मज उनसे सदैव के लिये दूर होरहा है। अन्त को सवारी नगर के बाहर निकली वेद मन्त्रों का उच्चारण करते वैराग के भजन गाते हुये स्मशान भूमि तक पहुंचे-स्मशान में अर्थी को रक्खा गया और मनुष्यों ने पुनः अन्तिम दर्शन की लालसा प्रकट की। एक भक्ति रस से भरा हुआ भजन गाया गया तथा ईश्वर की प्रार्थना की गई और अन्त को मृतक शरीर का विधिवत् वेद मन्त्रों की आहुतियों से दाह किया गया। हा ! वह अमूल्य शरीर केवल सब के देखते २ एक भस्म की ढेरी रहगया । भारत जननी के सच्चे लाल ! चिरकाल से सोती हुई आर्य जाति को उठाने के द्वितीय प्रवर्त्तक, धर्म्म पर सर्वस्व न्यौछावर करनेवालों के अमूल्य रत्न हा ! वीर लेखराम यद्यपि तुम हमसे सदैव के लिये दूर होगये हो परन्तु तुमने अपनी रक्त धारा बहाकर-भारतवर्ष में सच्चे धर्म पर न्योछावर होने

वालों के लिये उत्तम भूमि का संस्कार किया है। एक २ रक्त बिन्दु से एक २ वीर उत्पन्न होने की आशा है। तुमको क़त्ल नहीं किया गया, वरन क़ातिल ने अपनी जाति की जड़ में कुल्हाड़ा मारलिया। तुम्हारा क्या मरा शत्रुओं का मान मारा गया। यह तुम्हारा कलेवर तो नश्वरही था! परन्तु आपने अपने तईं विनश्वर कीर्ति के पद पर पहुंचा दिया। प्यारे नवयुवको? इस नश्वर शरीर से अमरपद प्राप्ति का इससे अधिक क्या उपाय होसकता है कि सत्य पर बलिदान के लिये कटिबद्ध रहे! वेद आज्ञा देता है कि हमें कर्त्तव्य परायण होना चाहिये। हम कर्म्म योगी बनें इस शरीर का अन्त में क्या होगा?

वायु रनिलममृतमथेदं भस्मान्त ँ शरीरम्।
ओ३म् क्रतो स्मर क्लिबे स्मर कृत ँ स्मर॥ यजुर्वेद।

अर्थात् देहान्तरों में जानेवाला पार्थिवादि विकारों से रहित जीवात्मा अमर है और यह भौतिक शरीर भस्म होने पर्य्यन्त है ऐसा समझकर हे जीव तू प्रणव के वाच्यार्थ का स्मरण कर बल प्राप्ति के लिये स्मरण कर अपने किये हुये का स्मरण कर॥

॥ इत्योम् शम्॥